शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 10 अंक : 7   1 फरवरी , 2018

(फाल्गुन, विक्रम संवत् 2074)

संस्थापक — स्व. मुकुन्द राव कुलकर्णी
संरक्षक — के.नरहरि

❖

परामर्श
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक
सन्तोष पाण्डेय

❖

सह सम्पादक
विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी ❑ भरत शर्मा

❖

संपादक मंडल
प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय
डॉ. नाथू लाल सुमन
डॉ. एस.पी. सिंह
डॉ. ओमप्रकाश पारीक

❖

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी
बसन्त जिन्दल ❑ नौरंग सहाय भारतीय
कार्यालय प्रभारी
आलोक चतुर्वेदी : 9782873467

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 011-22914799

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 20/-   वार्षिक शुल्क 200/-
आजीवन (दस वर्ष) 1500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

भारतीय जीवन पद्धति और शिक्षा ❑ डॉ. बुद्धमति यादव

'जीवन जीना भी एक कला है' यह कला ही भारतीय जीवन पद्धति का आवश्यक अंग है। हमारे दैनिक कार्यों में जल्दी सोने और जल्दी जागने का विशेष महत्त्व है। प्रातः सोकर उठने पर 'कर-दर्शन' परम्परा जीवन में धर्म और कर्म के संतुलन को अभिव्यक्त करती है। 'संध्या-वन्दन' परम शक्ति के साथ तादात्म्य स्थापित कर वातावरण शुद्धि के माध्यम से पंचमहाभूतों के प्रति कृतज्ञता एवं सम्मान की अभिव्यक्ति है। आज भी भारतीय परिवारों में भोजन-शुद्धि विशेष महत्त्व रखती है- 'जैसा खाय अन्न वैसा होय मन' अतः आहार शुद्धौ-सत्वशुद्धिः से शरीर, मन, बुद्धि, प्राण और आनन्दमय कोष तक की शुद्धि का विधान है।

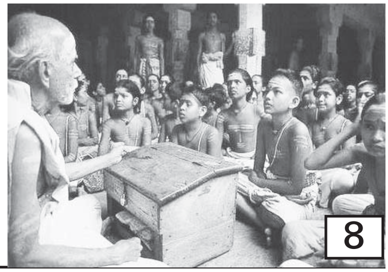

8

अनुक्रम

4.	नियम व संयम स्वयं में शिक्षा	- सन्तोष पाण्डेय
6.	आर्यावर्त दर्शन में नियमित जीवन पद्धति	- प्रो. मधुर मोहन रंगा
10.	वैदिक जीवन पद्धति से अनुप्राणित हो - शिक्षा	- डॉ. रेखा भट्ट
12.	नियमित जीवन व आहार-विहार-विज्ञान	- डॉ. सुमन बाला
18.	सा विद्या या विमुक्तये	- डॉ. ऋतु सारस्वत
20.	विकास की भारतीय जीवन शैली	- आशुतोष जोशी
27.	नियमित जीवन-पद्धति : साफल्य का मूल-मंत्र	- डॉ. शिप्रा पारीक
29.	सुख, साधना और सोम	- विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
31.	शिक्षा नीति लाएँ तो सारे प्रश्नों के उत्तर भी मिलें	- जगमोहन सिंह राजपूत
33.	बदला जमाना बदले खेल	- नाज़ खान
36.	Child labour : A Necessary Evil	- Dr. Anita Modi
39.	प्रोफेसर बलराज मधोक	- विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
41.	'कुटुम्ब प्रबोधन' पुस्तक समीक्षा	- उमेश कुमार चौरसिया
42.	गतिविधि	

Four Ashrams in human life

❑ Dr. TS Girishkumar

Bharatiya knowledge tradition closely observes both man and the cosmos in inter connectivity and brought out many instructions for legitimate and appropriate existence, through knowing, through an appropriate education pattern. In one sentence, it could be stated that for Bharat, everything begins from the Vedas andeverything is aimed at Moksha. In this context, one could discuss about "Yama" and "Niyama"before going into the four Ashramas of human existence, as the four ashramas in life are actually patterned through Yama and Niyama as well as the Purusharthas.

15

नियम व संयम स्वयं में शिक्षा

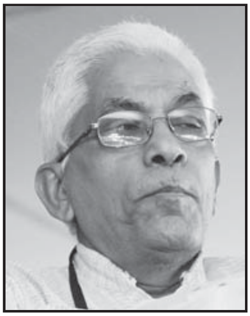

समय के रथ को वापस पीछे की ओर मोड़ना तो संभव नहीं है। प्राचीन गुरुकुल व्यवस्था को पुनर्जीवित करना तो अत्यन्त कठिन होगा, परन्तु इसके मौलिक विशेषताओं यथा आत्मानुशासन, संयमित जीवन, जीवन व व्यवहार नियमितता व निरन्तरता से परिपूर्ण शिक्षा व्यवस्था हेतु प्रयास अवश्य किये जा सकते हैं। इन गुणों से युक्त शिक्षा प्रणाली ही कर्तव्यों के प्रति जागरूक बना सकती है। सोच व व्यवहार की शुद्धता, संतोषी स्वभाव व स्वाध्याय की प्रवृत्ति निःसंदेह धर्म के अनुकूल आचरण को प्रेरित करने में समर्थ होगी। अनुशासन व कर्तव्य बोध बढ़ेगा तथा सुखी, सार्थक व उद्देश्यपूर्ण जीवन शैली का पुनः प्रादुर्भाव हो सकेगा।

❑ **सन्तोष पाण्डेय**

संपादकीय

थोड़ा गौर से यदि अवलोकन किया जाय तो अनुभव होगा कि प्रकृति, ब्रह्माण्ड व सृष्टि एक नियमित, संयमित निरंतरता से स्वयं संचालित हो रही है। यह अनादि काल से चली आ रही प्रवृति है। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री एल्फ्रेड मार्शल ने अपनी पुस्तक 'अर्थशास्त्र के प्रारम्भिक पृष्ठ पर ही लिखा कि 'प्रकृति कूद-कूद कर नहीं वरन कदम दर कदम आगे बढ़ती है। व्यक्ति, समाज व राष्ट्र की सफलता, प्रगति व उपलब्धियाँ नियमितता, संयम एवं निरन्तरता से ही संभव हो सकती है। भारतीय जीवन में तादात्म पर बल दिया तथा भौतिकता के साथ अध्यात्म को अपनाया, परन्तु प्राथमिकता अध्यात्म को दी तथा अध्यात्म के आधार पर ही व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन पद्धति अपनायी। अध्यात्म आधारित जीवन पद्धति में व्यक्ति व समाज के चहुँमुखी विकास एवं व्यक्ति में अर्न्तनिहित सभी क्षमताओं को पूर्णता में बदलने वाली व्यवस्था में संयमित नियमितता पूर्ण एवं निरन्तरता वाली, जीवन शैली पर बल दिया। मनुष्य सुखी, संतुष्टि से परिपूर्ण तथा सार्थक-जीवन के लिये शारीरिक, आध्यात्मिक, मानसिक एवं भावनात्मक विकास आवश्यक है। इन्हें स्वाभाविक व स्वस्थ बनाने के लिये यम-नियमों का पालन, आश्रम व्यवस्था तथा चारों पुरुषार्थों को जीवन का अंग बनाना आवश्यक है। यम-नियमों, आश्रम व्यवस्था का ध्येय मानव जीवन को प्रकृति के साथ सहयोग व सहअस्तित्व पूर्ण बनाकर सन्तुलन बनाये रखना है। भारतीय जीवन पद्धति को परम लक्ष्य, मोक्ष (salxation) प्राप्त करना है तब ही जीवन उद्देश्यपूर्ण व सार्थक बन सकता है।

यम का संबंध सार्थक जीवन के लिये धर्म शास्त्रों में दिये गये निर्देशों से है जो अन्ततः मनुष्य को कामनाओं से मुक्ति दिलाने में सहायक होने हैं और मोक्ष के अभीष्ट को पूरा करते हैं। इन निर्देशों के पालन से व्यक्ति मनसा, वाचा, कर्मणा स्वयं अनुशासित करता है ताकि वह ब्रह्माण्ड के सह अस्तित्व का पालन करे व बिना किसी व्यवधान के अथवा असंतुलन पैदा किये बिना संपन्न किये जा सके। इस प्रकार स्वयं को अनुशासित करना शिक्षा का ही स्वरूप है। स्व-अनुशासन की प्रक्रिया में अन्तिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति के लिये अनेक कर्तव्यों का निर्वाह अपेक्षित है, इन्हीं कर्तव्यों को नियम के रूप में बतलाया गया है। यद्यपि धर्म गुरुओं ने अनेक नियम बतलाये हैं, इनमें पाँच नियम प्रमुख हैं।

प्रथम नियम है शोच, अर्थात् शुद्धीकरण। तन, मन, वाणी व कर्म सभी में शुद्धता (Purity) होनी चाहिये। द्वितीय नियम है- सन्तोष, सुखी (आनन्द) व सभी कामनाओं के पूरा होने का भाव रखना। मनसा, वाचा, कर्मणा द्वारा मनुष्य स्वयं को सभी प्रकार की परिस्थितियों या दशाओं

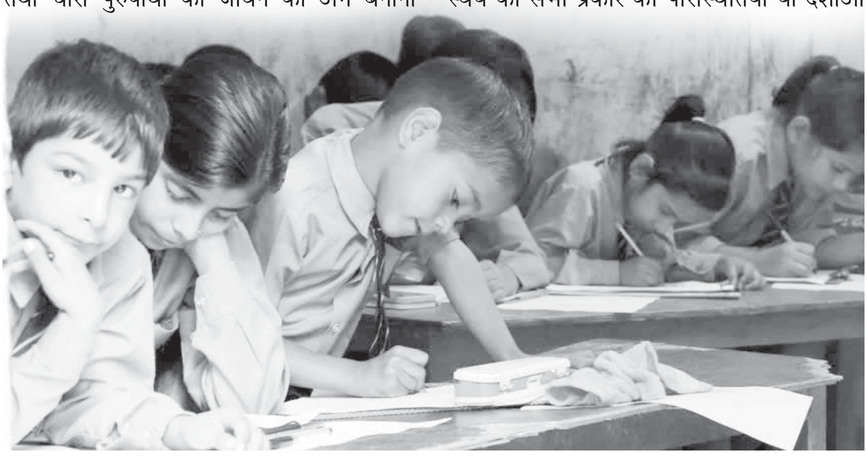

में संतोषी (Contentment), सुखी (आनन्द) व सभी कामनाओं के पूरा होने का भाव बनाये रखता है। तृतीय नियम है तपस (TAPAS), जिसका अभिप्राय: जीवन की सभी प्रकार की स्थितियों में समान अथवा स्थितिप्रज्ञ बने रहना है। यह स्व-अनुशासन की वह स्थिति है, जिसमें मनुष्य अर्वाचलित व अप्रभावित बना रहता है। इसके लिये कठोर संयम एवं नियंत्रण के प्रयास अपेक्षित होते हैं। चतुर्थ नियम है-स्वाध्याय, जिसका अभिप्राय: मनुष्य को ज्ञान प्राप्ति के प्रयासों में लगाता है, उपलब्ध ज्ञान पर मनन, विश्लेषण द्वारा नये ज्ञान का सृजन करना है। पंचम नियम है ईश्वर प्राणिधान का अभिप्राय: है स्वयं को ईश्वर को समर्पित करना जिससे जीवन की अंतिम परिणति ब्रह्म में लीन हो जाना होती है। ये नियम जीवन के लक्ष्य प्राप्ति के लिये अनवरत कर्तव्यों की पूर्ति के रूप में निरूपित होते हैं।

भारतीय जीवन पद्धति में मानव जीवन को चार कालों जिन्हें आश्रम कहा जाता है। चार आश्रमों के ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ आश्रम व संन्यास आश्रम में बाँटा गया है। इन चारों आश्रमों का मनुष्य अपेक्षित दायित्वों को पूरा करते हुये जीवन को सार्थक बनाता है व मोक्ष की अवस्था को प्राप्त करता है। मोक्ष से अभिप्राय: जन्म-मरण के चक्रव्यूह से मुक्त होकर आत्मा का परमात्मा में विलीन होना है। परन्तु आज इसे सभी प्रकार की कामनाओं, राग-द्वेष, सफलता-असफलता से मुक्त होकर केवल कर्तव्य निर्वाह के रूप देखा जा सकता है। भारतीय जीवन पद्धति में श्रेष्ठ मूल्यों को पुरुषार्थ के रूप में व्यक्त किया गया है। ये चार शाश्वत जीवन मूल्य है, धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष। ये मूल्य (पुरुषार्थ) मानव जीवन को श्रेष्ठ व सार्थक बनाने का मार्ग प्रदान करते हैं? मनुष्य की अनेकानेक कामनायें, अभिलाषायें होती हैं जिनकी पूर्ति से व्यक्ति का जीवन चलता है। इन्हें काम कहा जाता है। इनकी पूर्ति के लिये भौतिक संसाधन आवश्यक होते हैं, इनकी प्राप्ति के लिये प्रयास ही अर्थ है। अर्थप्राप्ति के लिये मनुष्य को कर्म करने होंगे। परन्तु यह कर्म कैसे हों का निर्धारण धर्म द्वारा होता है। धर्म का अभिप्राय नैतिक, धार्मिक नीति संगत आचरण से है, धर्म सामाजिक जीवन स्वीकार्य गतिविधियों का स्वरूप है। तीनों पुरुषार्थों के समग्र रूप से देखने से स्पष्ट होता है कि धर्मसंगत आचरण या व्यवहार के द्वारा मनोकामनाओं की पूर्ति हेतु अर्थ प्राप्ति ही उचित मार्ग है। जीवन के सभी आश्रमों में यम-नियमों का पालन करते हुये जीवन के पुरुषार्थों द्वारा ही जीवन को सार्थक व उद्देश्यपूर्ण बनाया जा सकता है। इस हेतु आत्म अनुशासन की महती आवश्यकता होती है जो संयम, नियमितता व निरन्तरता से ही प्राप्त हो सकती है। इनका पालन करने पर ही व्यक्ति मोक्ष का पात्र बनता है। वह सुखी, संतुष्टिपूर्ण व कामना रहित जीवन जी सकता है।

प्राचीन भारत की गुरुकुल व्यवस्था यम-नियमों पर जोर देते हुये, छात्र को निरन्तर अभ्यास व संयम द्वारा जीवन पद्धति में दीक्षित करती। परन्तु आज स्थिति पूर्णत: भिन्न है। विदेशियों के निरन्तर आगमन व सम्पर्क से भारतीय जीवन पद्धति की व्याप्ति कमजोर हुई है। आध्यात्मिकता शिथिल हुई है। पश्चिमी भौतिकतावादी दृष्टिकोण जीवन के सभी पहलुओं को प्रभावित कर रहा है। पश्चिमी शिक्षा पद्धति के व्यापक प्रसार व प्रचार ने प्राचीन शिक्षा व्यवस्था व शाश्वत जीवन मूल्यों वाली जीवन शैली को ध्वस्त कर दिया है। आज सहअस्तित्व व बिना व्यवधान वाली जीवन शैली व सन्तुलनकारी व्यवहार को प्रतियोगितापूर्ण व्यवहार व लक्ष्य प्राप्ति के लिये सभी प्रकार के आचरण को उचित मानने वाली जीवन शैली की स्थापना हेतु लगे हुए हैं। सफलता के सभी प्रकार से संक्षिप्त मार्ग (Shortcut) को अपनाने वाली व्यवस्था चलन में है, जिसमें व्यक्ति न्यूनतम प्रयास से अधिकतम प्राप्ति को लक्ष्य मानता है। ऐसी जीवन शैली को न तो उचित ही माना जा सकता है और न ही जीवन को उद्देश्यपूर्ण बनाने वाली। ऐसी जीवन शैली पर आधारित शिक्षा व्यवस्था एक न्यायपूर्ण, समानतावादी व जीवन को उद्देश्यपूर्ण बनाने वाली व्यवस्था नहीं दे सकती है। प्रतियोगिता व भौतिकतावादी दृष्टिकोण की प्रधानता ने एक 'अधिकार' माँगने वाले समाज को जन्म दिया है जिसमें कर्तव्यों का निर्वाह करते हुये धर्म संगत आचरण द्वारा सभी के साथ सहयोग करने की व्यवस्था का अभाव है। इससे समाज में भौतिक संतुष्टि का स्तर तो भले ही बढ़े, परन्तु सुख निरन्तर घट रहा है। सर्वत्र असहमति, विरोध, टकराव की प्रवृत्तियाँ बढ़ रही हैं। इन सबके पीछे शिक्षा को देखा जा सकता है। शिक्षा व्यवस्था अस्त-व्यस्त है। एक उद्देश्यपूर्ण जीवन शैली देने में शिक्षा व्यवस्था अक्षम है। स्वयं शिक्षा व्यवस्था ही अनुशासनहीनता से ग्रस्त है, वह विद्यार्थियों को किस प्रकार अनुशासित करेगी, यह प्रश्न चिन्ह है। ऐसे में प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इस स्थिति का निदान क्या है? समय के रथ को वापस पीछे की ओर मोड़ना तो संभव नहीं है। प्राचीन गुरुकुल व्यवस्था को पुनर्जीवित करना तो अत्यन्त कठिन होगा, परन्तु इसके मौलिक विशेषताओं यथा आत्मानुशासन, संयमित जीवन, जीवन व व्यवहार नियमितता व निरन्तरता से परिपूर्ण शिक्षा व्यवस्था हेतु प्रयास अवश्य किये जा सकते हैं। इन गुणों से युक्त शिक्षा प्रणाली ही कर्तव्यों के प्रति जागरूक बना सकती है। सोच व व्यवहार की शुद्धता, संतोषी स्वभाव व स्वाध्याय की प्रवृत्ति नि:संदेह धर्म के अनुकूल आचरण को प्रेरित करने में समर्थ होगी। अनुशासन व कर्तव्य बोध बढ़ेगा तथा सुखी, सार्थक व उद्देश्यपूर्ण जीवन शैली का पुन: प्रादुर्भाव हो सकेगा। ❑

आर्यावर्त दर्शन में नियमित जीवन पद्धति

❑ प्रो. मधुर मोहन रंगा

हमारा शरीर अपनी आन्तरिक कार्यिकी के कारण निर्धारित समय पर कार्यों का सम्पादन करता है जिसे जैविक घड़ी (Biological clock) कहते हैं। यह शरीर में होने वाली जैविक क्रियाओं को नियंत्रित करती है, इसे जैव-चक्रिय आवर्तन (Circa-dian rhythms) कहते हैं। अर्थात् जब हम हमारे आन्तरिक वातावरण के साथ बाह्य वातावरण में समन्वय स्थापित करेंगे तभी स्वस्थ व दीर्घायु होंगे। अत: भारतीय जीवन दर्शन में वर्णित दैनिक क्रियाओं का नियमपूर्वक पालन ही अच्छे स्वास्थ्य की आधारशिला है। वस्तुत: शिक्षा के द्वारा इस पद्धति का विस्तार करना चाहिये। परंतु आज हम परम्परा व आधुनिकता के बीच के द्वन्द्व में उलझ गये हैं।

भारतीय जीवन परम्परा में उद्देश्यपूर्वक जीवनयापन के महत्त्व पर बल दिया है। इसमें व्यक्ति स्वयं केन्द्रित न होकर समष्टि के कल्याण को जीवन का लक्ष्य बनाता है व सम्पूर्ण मानवता, जैव-विविधता एवं पर्यावरण की पूजा को जीवन का आदर्श मानकर कर्म पथ पर अग्रसर होता है। परंतु लक्ष्य-आधारित जीवनचर्या में महत्त्वपूर्ण होता है नियमित जीवन पद्धति, इसी कारण हमारे यहाँ ज्ञान, कर्म, उपासना व जीवन शैली का संदेश देते हैं। कर्म से तात्पर्य, नियमित जीवन में कार्यों का सम्पादन, आन्तरिक व बाह्य वातावरण में सामंजस्य स्थापित करके निष्पादन करना चाहिये। अत: प्राचीन काल से ही हमारे ऋषियों-मुनियों ने शोध व मनन के द्वारा विश्व तथा मानव कल्याण के विचार को केन्द्र बिन्दु मानकर चिंतन किया। उनके अनुसार मानव जीवन में शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक सन्तुलन होना चाहिये, तभी व्यष्टि व समष्टि का समग्र विकास होगा। इन तीनों में समन्वय होना अनिवार्य है, उपरोक्त त्रिक के समन्वय को स्थायित्व प्रदान करने की दृष्टि से नियमित जीवन पद्धति का महत्त्व है, जिसके मूल में शिक्षा है। भारतीय संस्कृति कर्म-सिद्धान्त पर आधारित है इसलिए नित्य कर्म पर बल दिया है। प्रात: काल उठने के बाद स्नान पूर्व जो आवश्यक कार्य हैं, शास्त्रों में उनके लिए सुनियोजित विधि-विधान हैं। सूर्योदय से पूर्व ब्रह्ममुहूर्त में ही जग जाना चाहिये। आँखों के खुलते ही दोनों हाथों की हथेलियों को देखते हुए 'आचार प्रदीप' में वर्णित निम्न श्लोक का पाठ करना विधि-विधान में बताया गया है-

कराग्रे वसते लक्ष्मी: करमध्ये सरस्वती।
करमूले स्थितो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम्।।

हाथ के अग्रभाग में लक्ष्मी, मध्य में सरस्वती, मूल भाग में ब्रह्मा जी निवास करते हैं, अत: प्रात: काल दोनों हाथों का अवलोकन करना चाहिये। यह श्लोक हमें कर्म करने को प्रेरित करता है कि प्रतिदिन प्रात: काल दैनिक जीवनचर्या का संकल्प लें व उसी के अनुसार कार्य करें। ब्रह्ममुहूर्त की निद्रा शरीर की क्रियाओं पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है, इसी कारण प्रात: काल सूर्योदय से पूर्व उठना स्वास्थ्य के लिए लाभकारी हैं। शय्या से उठकर पृथ्वी पर पैर रखने से पूर्व पृथ्वी माता का अभिवादन कर व उन पर पैर रखने की विवशता के लिए क्षमा माँगने हेतु निम्न श्लोक का स्मरण करते हैं -

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डिते।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्श क्षमस्व मे।।

अर्थात् समुद्ररूपी वस्त्रों को धारण करने वाली, पर्वतरूप स्तनों से मण्डित भगवान् विष्णु की पत्नी पृथ्वी देवी, आप मेरे पाद-स्पर्श को क्षमा करें। इस प्रकार प्राकृतिक संसाधन की आधार पृथ्वी को माता का स्थान देकर हमने, प्रकृति की पूजा की है व अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण संरक्षण

तथा सम्वर्द्धन के प्राचीन विचार का स्मरण किया है। माता-पिता, गुरु व ईश्वर का आशीर्वाद लेना भी हमारा पुनीत कर्त्तव्य है।

स्नान करते समय भी हम निम्न श्लोक का स्मरण करते हैं-

गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वति।
नर्मदे सिंधु कावेरी जलेऽस्मिन्सन्निधिं कुरू।।

भारत की सभी नदियों, महत्त्वपूर्ण तीर्थस्थानों, महापुरुषों का स्मरण हमें हमारी साँस्कृतिक धरोहरों का स्मरण करा कर राष्ट्रीय एकता का संदेश देकर सभी को मुख्यधारा व राष्ट्रीय जीवन में योगदान का संदेश देता है, एकत्व के भाव का भी संचार करता है, इसी में राष्ट्रीय अखण्डता का भाव निहित है। शारीरिक व्यायाम व योग को जीवनचर्या का महत्त्वपूर्ण भाग माना गया है। महर्षि पतंजलि ने योग दर्शन को विकसित कर उसे नि:स्वार्थ भाव से सम्पूर्ण विश्व को समर्पित किया, योग सूत्र 1.2 में कहा है, **'योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:'** योग एकात्मता का भाव रखता है, 'स्व' से सृष्टि से जोड़ता है, **'पूज्यते अनेन इति योग:'** योग किसी धर्म पंथ या विचार से संबद्ध न होकर, एक जीवन पद्धति है, जो सभी को जोड़ती है। इसी प्रकार दीर्घ आयु प्राप्त करने व शरीर को स्वस्थ रखने के लिए प्राणायाम का महत्त्व है। यह योग के आठ अंगों में से एक है। प्राणायाम= प्राण-आयाम। इसका शाब्दिक अर्थ है- ''प्राण (श्वसन) को दीर्घ करना। प्राणायाम करने वाला व्यक्ति स्वर्ण की तरह चमक उठता है-

प्राणायामैस्त्रिभि: पूतस्तत्क्षणा ज्वलतेऽग्निवत्।
(प्रयोग पारिजात)

प्राणायाम सिद्ध होने पर हजारों वर्षो की लम्बी आयु प्राप्त होती है।

गच्छँस्तिष्ठन् सदा कालं वायुस्तीकरणं परम्।
सर्वकालप्रयोगेण सहस्त्रायुर्भवेन्नर:।।

प्राणायाम का जीवन में बहुत महत्त्व है, इससे शारीरिक उन्नति के साथ-साथ व्यक्ति दीर्घ आयु प्राप्त कर स्वस्थ रहता हैं। साँस

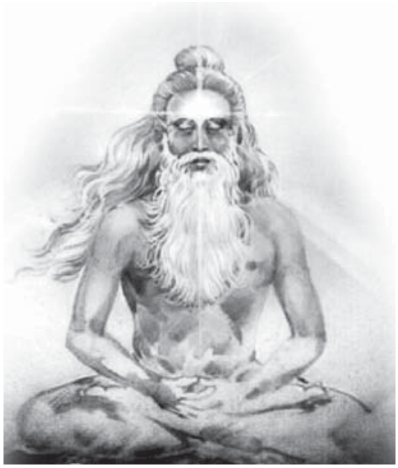

लेने व छोड़ने से शुद्ध वायु फेफड़ों में प्रवेश करती है व अशुद्ध वायु बाहर निकलती है, प्राण वायु शरीर के प्रत्येक ऊतक तक पहुँचती है जो उसके लिए उपयोगी है। यह रक्त शोधन क्रिया में सहायक होती है। प्राणायाम के तीन भेद होते हैं- पूरक, कुम्भक व रेचक। अत: भारतीय नित्य-कर्म में सम्पूर्ण दिनचर्या का वर्णन है उपरोक्त विषय वस्तु संकेतात्मक विवरण ही प्रस्तुत करती है, परंतु इससे यह तो स्पष्ट हो जाता है कि आर्यावर्त ऋषि-मुनियों ने जीवन के जटिलतम रहस्यों को सरलतम प्रकार से समझा कर मानवता पर उपकार किया है। 24 घंटे में हम पूजा-पाठ, अध्ययन-अध्यापन, पराक्रम, व्यापार या जीविकोपार्जन हेतु कार्य व सेवा कार्य करते हैं यह जीवनचर्या हमारे यहाँ उल्लेखित हैं। प्रात: काल सूर्योदय से पूर्व जागरण हमारे प्राचीन चिंतन में वर्णित है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुसार 'मेलाटोनिन स्त्राव' नींद के लिए जिम्मेदार है यह सूर्योदय के बाद बंद हो जाता है या कम हो जाता है। इसी प्रकार समय पर सोना भी हमारे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। रात्रि में 9 बजे के बाद 'मेलाटोनिन' स्त्राव प्रारम्भ हो जाता है। यह एक प्रकार का हारमोन है जो नींद के लिए जिम्मेदार हैं।

इस प्रकार हमारा शरीर अपनी आन्तरिक कार्यिकी के कारण निर्धारित समय पर कार्यों का सम्पादन करता है जिसे जैविक घड़ी (Biological clock) कहते हैं। यह शरीर में होने वाली जैविक क्रियाओं को नियंत्रित करती है, इसे जैव-चक्रीय आवर्तन (Circadian rhythms) कहते हैं। अर्थात् जब हम हमारे आन्तरिक वातावरण के साथ बाह्य वातावरण में समन्वय स्थापित करेंगे तभी स्वस्थ व दीर्घायु होंगे। अत: भारतीय जीवन दर्शन में वर्णित दैनिक क्रियाओं का नियमपूर्वक पालन ही अच्छे स्वास्थ्य की आधारशिला है। वस्तुत: शिक्षा के द्वारा इस पद्धति का विस्तार करना चाहिये। परंतु आज हम परम्परा व आधुनिकता के बीच के द्वन्द्व में उलझ गये हैं। छद्म आधुनिकता, पाश्चात्य सोच व अनियंत्रित भोग के कारण हम हमारे जीवन मूल्यों से दूर जा रहे हैं। आज हम आधुनिकता के युग में 'फिटनेस ट्रेड्स' (Fitness trades) जैसे वियरेबल टेक्नालॉजी (ऐसे हेल्थ गजेट्स (health gadgets) जिन्हें 24 घंटे हाथ में पहने जा सकता है), बॉडी वेट ट्रेनिंग, स्मार्टफोन पर एक्सरसाइज, पर्सनल ट्रेनिंग, फंक्शनल फिटनेस (ऐसी फिटनेस जिसमें पालतू और घरेलू जानवरों की मदद से सक्रियता बढ़े) आदि फिटनेस ट्रेंड्स आज उपलब्ध हैं। अत: आज के इस युग में आवश्यकता इस बात की है कि हम हमारी पारम्परिक नियमित जीवन पद्धति से इतर पाश्चात्य शैली को न अपनाएँ क्योंकि हमारी जीवन शैली सम्पूर्ण वैज्ञानिक आधार पर आधारित है। हम परम्परागत नित्यकर्मों को तर्कों के आधार पर आधुनिकता से जोड़ कर, सार्थक जीवनचर्या को सभी को सिखा सकते हैं, तभी व्यक्ति नीरोगी होंगे।❑

(विभागाध्यक्ष पर्यावरण विज्ञान विभाग,
सरगुजा विश्वविद्यालय अम्बिकापुर, छ.ग.)

भारतीय जीवन पद्धति और शिक्षा

'जीवन जीना भी एक कला है' यह कला ही भारतीय जीवन पद्धति का आवश्यक अंग है। हमारे दैनिक कार्यों में जल्दी सोने और जल्दी जागने का विशेष महत्त्व है। प्रातः सोकर उठने पर 'कर-दर्शन' परम्परा जीवन में धर्म और कर्म के संतुलन को अभिव्यक्त करती है। 'संध्या-वन्दन' परम शक्ति के साथ तादात्म्य स्थापित कर वातावरण शुद्धि के माध्यम से पंचमहाभूतों के प्रति कृतज्ञता एवं सम्मान की अभिव्यक्ति है। आज भी भारतीय परिवारों में भोजन-शुद्धि विशेष महत्त्व रखती है- 'जैसा खाय अन्न वैसा होय मन' अतः आहार शुद्धौ-सत्वशुद्धिः से शरीर, मन, बुद्धि, प्राण और आनन्दमय कोष तक की शुद्धि का विधान है।

❑ डॉ. बुद्धमति यादव

महात्मा गाँधी ने शिक्षा का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा था कि 'शिक्षा से मेरा तात्पर्य है व्यक्ति के शरीर, मन और आत्मा का विकास।' वास्तव में देखा जाए तो क्या आज की शिक्षा युवाओं में इन तीनों का विकास करने में सक्षम है? नहीं। आज की शिक्षा व्यक्ति को मात्र निजी लाभ के लिए धन कमाने की मशीन बनाना चाहती है, जो किसी भी प्रकार से व्यक्ति, समाज, देश और राष्ट्र के लिए कल्याणकारी नहीं है।

युवा किसी भी देश के 'भविष्य-निर्माता' होते हैं। आज भारतीय, युवाओं पर दृष्टि डालते हैं, तो पाते हैं कि वे न तो तन से स्वस्थ हैं और न ही मन से, आत्मा से स्वस्थ होना तो दूर की बात प्रतीत होती है। तन और मन से अस्वस्थ युवा कैसे स्वस्थ समाज, स्वस्थ देश का निर्माण करेंगे? यह विचारणीय बिन्दु है।

विचार करने पर जो कारण इसके मूल में दृष्टिगोचर होता है वह है- अव्यवस्थित और असंयमित जीवन शैली। जीवन शैली से तात्पर्य है – जीवन जीने की कला। 'जीवन जीना भी एक कला है' यह कला ही भारतीय जीवन पद्धति का आवश्यक अंग है। हमारे दैनिक कार्यों में जल्दी सोने और जल्दी जागने का विशेष महत्त्व है। प्रातः सोकर उठने पर 'कर-दर्शन' परम्परा जीवन में धर्म और कर्म के संतुलन को अभिव्यक्त करती है। 'संध्या-वन्दन' परम शक्ति के साथ तादात्म्य स्थापित कर वातावरण शुद्धि के माध्यम से पंचमहाभूतों के प्रति कृतज्ञता एवं सम्मान की अभिव्यक्ति है। आज भी भारतीय परिवारों में भोजन-शुद्धि विशेष महत्त्व रखती है- 'जैसा खाय अन्न वैसा होय मन' अतः आहार शुद्धौ-सत्वशुद्धिः से शरीर, मन, बुद्धि, प्राण और आनन्दमय कोष तक की शुद्धि का विधान है। भोजन करने से पूर्व 'भोजन-मंत्र' का उच्चारण करने में भी सहभाव और समभाव का दृष्टिकोण निहित है। 'साँई इतना दीजिये जामै कुटुम्ब समाय, मैं भी भूखा ना रहूँ साधु न भूखा जाय' जैसे आदर्श लोक व्यवहार में आचरित है। सबको भोजन कराने के पश्चात ही स्वयं भोजन करने का विधान है।

भारतीय संस्कृति में 'कण-कण में भगवान व्याप्त है' इस विचार को पोषण मिलता है, इसलिए भारतीय परिवारों में गाय, कुत्ते, चिड़ियों, चीटियों तक के भोजन की व्यवस्था, परम्परा रूप में विद्यमान है, जो समस्त जीवों और सृष्टि के साथ मनुष्य के सहभाव का पोषक है। दैनिक कार्यों में तुलसी, पीपल जैसे वृक्षों का प्रतिदिन सिंचन भारतीय जीवन शैली का अभिन्न अंग है, जो प्रकृति

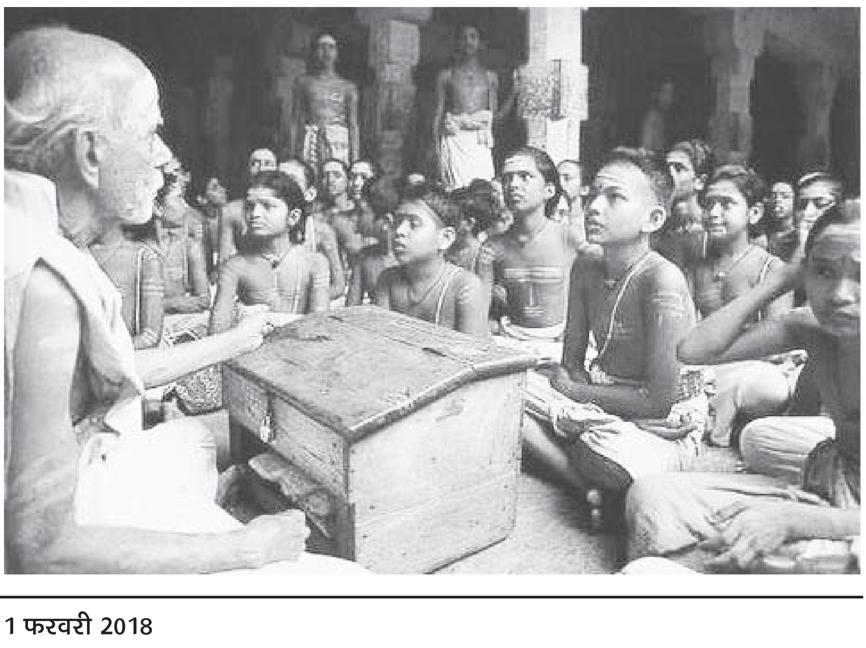

के साथ सन्तुलन बनाए रखने का प्रतीक है।'**माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्या:**' जैसे मंत्र मनुष्य को प्रकृति के साथ अनावश्यक छेड़छाड़ करने से रोकते हैं। इस प्रकार भारतीय जीवन-पद्धति समस्त जड़ चेतन को आत्मवत् देखने का उपदेश देती है। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' भाव के कारण ही भारतीय जीवन-पद्धति अन्य जीवन पद्धतियों से श्रेष्ठ है। इसी कारण आज पश्चिम, पूर्व की ओर आशा भरी निगाहों से देख रहा है। कैसी विचित्र स्थिति है कि जो हमारा है उसे पश्चिम अपना रहा है। संस्कृत और संस्कृति दोनों को आत्मसात् करने हेतु प्रयासरत है। दूसरी ओर हम हमारी ही संस्कृति को छोड़कर पश्चिमी संस्कृति को अपनाने को आतुर हैं।

पश्चिमी संस्कृति के अंधानुकरण के कारण हमारा खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार सभी प्रभावित हो रहे हैं अर्थात् पूरी जीवन शैली ही बदलती जा रही है। 'Early to bed & Early to rise' की अवधारणा अब धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही है, देर से सोना और देर से जागना जीवन शैली का अंग बनता जा रहा है। भोजन करने का भी कोई समय नहीं, कब, क्यों, क्या और कैसे भोजन ग्रहण किया जाए, इसका भी विचार नहीं किया जाता। स्नान-ध्यान का भी महत्व भी धीरे-धीरे गौण होता जा रहा है। मात्र उन्मुक्त भौतिकवादी जीवन-पद्धति का अनुसरण ही जीवन का ध्येय बनता जा रहा है। ये स्थिति अनेक प्रकार की समस्याओं को बढ़ावा दे रही है।'पहला सुख निरोगी काया' स्वप्न सी प्रतीत होने लगी है। जिस तरह के आँकड़े आ रहे हैं और जिस तरह की प्रवृत्तियाँ देखी जा रही है, उस पर जल्द ही विचार नहीं किया गया तो आने वाले समय का भारत युवा भारत नहीं, बल्कि बीमार भारत की पहचान हासिल कर लेगा। आगे चलकर इन रोगों के आनुवांशिक प्रभाव से भी इन्कार नहीं किया जा सकता।' अत: आवश्यक है एक ऐसी जीवन पद्धति की जो इन समस्याओं से निजात दिला सके।

भारतीय मनीषियों ने मानव जीवन को आध्यात्मिक, भौतिक और नैतिक रूप से संतुलित और उन्नत करने के लिए 'पुरुषार्थ' की नियोजना की थी।'पुरुषार्थ' का अर्थ है - मानवीय उद्योग का कोई प्रयोजन। यथा - 'धर्म' अर्थात् कर्त्तव्य का पालन करना, 'अर्थ' का तात्पर्य है आर्थिक शक्ति या धन। 'काम' अर्थात् कामनाओं की पूर्ति और अंतिम पुरुषार्थ मोक्ष अर्थात् मुक्ति है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये जीवन में क्रमश: प्राप्तव्य लक्ष्य है। अर्थ और काम धर्मानुकूल ही सेव्य हैं। धन सुमार्ग से प्राप्त हो और वह भी त्यागपूर्वक ही ग्राह्य है। चतुष्ट्य पुरुषार्थ का भारतीय जीवन पद्धति में बड़ा महत्त्व है। व्यक्ति धर्म, अर्थ और काम की पूर्ति द्वारा मानसिक सन्तोष प्राप्त करता है और जीवन के उच्चतम आदर्श-मोक्ष प्राप्ति की ओर आगे बढ़ता है। पुरुषार्थ के कारण ही व्यक्ति में मानवीय गुणों का विकास और धर्मानुकूल आचरण करने की प्रेरणा मिलती है, कर्त्तव्य के पालन हेतु प्रोत्साहित होता है। पुरुषार्थ भारतीय मनीषियों की एक अनुपम देन है, जो केवल भोगवाद की ओर व्यक्ति को प्रवृत्त नहीं करके उसे आध्यात्मिकता की ओर बढ़ने को भी प्रोत्साहित करती है। पुरुषार्थ सिद्धांत में जीवन के प्रति एक समन्वित और व्यापक दृष्टिकोण अपनाया गया है। यदि व्यक्ति केवल अर्थ और काम में ही डूबा रहे तो उसमें और पशु में कोई अंतर नहीं रह जाएगा। पुरुषार्थ का सिद्धांत मानव की पशु-प्रवृत्तियों का समाजीकरण करता है, उसकी आसुरी वृत्तियों को नियंत्रित करता है। यह पद्धति सांसारिक और आध्यात्मिक जीवन के बीच, स्वार्थ और परमार्थ के बीच एक सुंदर समन्वय स्थापित करती है। पुरुषार्थ व्यक्ति को अपने जीवन में क्या प्राप्त करना है, उसका लक्ष्य क्या है, उसे किन मूलभूत दायित्वों को निभाना है, इस विषय में भी बताता है। अर्थात् मानव जीवन का लक्ष्य इन चार पुरुषार्थों की प्राप्ति ही है। आज मानव अर्थ और काम को ही प्राप्त करने में लगा है, धर्म और मोक्ष जीवन-लक्ष्यों के रूप में गौण होते जा रहे हैं।

अत: आवश्यकता है भारतीय जीवन पद्धति को जन-जन तक पहुँचाने का यह कार्य शिक्षा द्वारा ही सम्पन्न हो सकता है। शिक्षा ही वह माध्यम है, जिसके द्वारा हम हमारी संस्कृति को न केवल भली प्रकार हस्तांतरित कर सकते हैं, बल्कि उसे संरक्षित भी रख सकते हैं।

भारतीय जीवन-पद्धति में ही वो क्षमता है जिससे व्यक्ति वर्तमान और भविष्य को सुन्दर बना सके। अत: निराशा और अंधकार के वातावरण में भारतीय जीवन पद्धति ही आशा का संचार करने में सक्षम है।

मेरो मन अनत कहाँ सुख पावे,
जैसे उड़ि जहाज को पंछी,
फिरि जहाज पै आवे।

अर्थात् जैसे ईश्वर से विमुख जीव संसार में कही भी सुख का अनुभव नहीं कर पाता, हरि भक्ति को अपनाकर ही मानव इस जीवन को सफल बनाने का प्रयास करता है, वैसे ही आधुनिक मानव आध्यात्मिकता को त्यागकर भौतिकता में ही वास्तविक सुख को खोज रहा है, फिर भी उसे सुख, शांति और जीवन में आनन्द की प्राप्ति नहीं हो रही, हर कहीं अपूर्णता का भाव विद्यमान है। यदि वास्तव में मानव को सच्चा सुख, सच्ची शांति, सच्चा आनन्द प्राप्त करना है तो उसे अपनी जड़ों की ओर लौटना होगा। वैसे ही जैसे जहाज का पंछी भ्रमित होकर जहाज से उड़कर चला जाता है, लेकिन भ्रम दूर हो जाने पर पुन: जहाज पर आ जाता है, वैसे ही हमें भी पश्चिमी संस्कृति को त्यागकर भारतीय जीवन पद्धति को अपनाना होगा, क्योंकि भारतीय संस्कृति में निहित शुभ कर्म, शुभ चिंतन, शुभ और कल्याणकारी मार्ग ही हमारे जीवन पथ को आलोकित करेगा, ऐसा हमारा विश्वास है। तभी व्यक्ति के शरीर, मन और आत्मा का विकास सम्भव है। शिक्षा का उद्देश्य भी तभी पूर्ण हो सकेगा।❑

(व्याख्याता-हिन्दी, जी.डी. कॉलेज, अलवर)

वैदिक जीवन पद्धति से अनुप्राणित हो - शिक्षा

❑ डॉ. रेखा भट्ट

भारतीय परंपराओं की वैज्ञानिकता और शाश्वत मूल्यों पर आधारित वैदिक जीवन पद्धति के कारण ही भारत में भिन्न भिन्न संस्कृतियाँ एक सूत्र में बँधी हुई है। धार्मिक संकीर्णता और हठधर्मिता से परे आज भी वैदिक संस्कृति ही प्रत्येक भारतवासी को अनुप्राणित करती है। सम्पूर्ण जगत को बंधुत्व भाव से जोड़ लेने वाली सनातन वैदिक संस्कृति ही हिन्दुत्व का पर्याय बन गई है। भारत वर्ष में कालातीत व वैदिक काल जीवन पद्धति ही भारतीय संस्कृति की पोषक रही है।

प्राचीन शिक्षण में वैदिक जीवन पद्धति से अनुप्राणित भारतीय सभ्यता व संस्कृति पूर्ण रूप से विकसित थी तथा भारत पूरे विश्व में अत्यन्त समृद्ध एवं वैभवशाली राष्ट्र था। प्राचीन भारत में वैदिक काल में ऋषि मुनियों के तप और साधना द्वारा प्रतिपादित गुरुकुल पद्धति से शिक्षा प्रदान की जाती थी। विद्यार्थी जीवन के प्रथम 25 वर्ष, ब्रह्मचार्य आश्रम में गुरु की सेवा करते हुए संस्कार व शिक्षा दोनों प्राप्त करते थे। ब्रह्म सूत्र के प्रथम अध्याय में शिक्षा (विद्या) के सम्बंध में कहा गया है -

विद्यास्ति ज्ञान विज्ञान दर्शनः संस्क्रियात्मनि।।

ब्रह्मसूत्र, अ.1।।

अर्थात् - ज्ञान विज्ञान एवं दर्शन की शिक्षा द्वारा आत्मा में संस्कार उत्पन्न करना ही विद्या है।

हिन्दू शास्त्रों में सेवा, आदर-सम्मान जैसे संस्कारों को जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है। इसका उल्लेख मनु स्मृति में इस प्रकार मिलता है-

अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्यवर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्।।

(मनु स्मृति,2/121)

अर्थात् - आदर सम्मान करने तथा नित्य वृद्धों की सेवा करने जैसे संस्कार से मनुष्य की आयु, विद्या, यश और बल चारों में वृद्धि होती है।

वैदिक शिक्षा पद्धति में यज्ञ हवन, ध्यान योग द्वारा विद्यार्थी में सात्विक मनोवृत्ति निर्मित की जाती थी। यम नियम के पालन द्वारा राग, द्वेष, मद, मोह, लोभ जैसे विकारों से मुक्त कर आत्मिक शुद्धि करने पर आन्तरिक शक्तियों को विकसित किया जाता था। इस प्रकार निर्दोष व नीरोगी संस्कारित विद्यार्थी के तेजोमय व्यक्तित्व का निर्माण होता था। विद्यार्थी वेद-वेदांत का अध्ययन करते हुए चिंतन-मनन की प्रक्रिया द्वारा वे जीवन के सत्यों को उजागर करते थे। शिक्षा पूर्ण होने पर विद्यार्थी आत्मकल्याण के साथ-साथ जन कल्याण के मार्ग पर अग्रसर होते थे। शिक्षा के समावर्तन के अवसर पर गुरु द्वारा धर्म का पालन करने अर्थात् कर्त्तव्य पथ पर आगे बढ़ने की प्रेरणा दी जाती थी, क्योंकि धर्म को ही चारों पुरुषार्थों - धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में शेष तीनों का नियामक माना गया है।

वेदों-उपनिषदों के आध्यात्मिक ज्ञान को सर्वमान्य महाग्रंथ गीता ने, कर्म योग, भक्ति योग और ज्ञान योग के रूप में ढाल कर जन सामान्य में सामाजिक चेतना जाग्रत की। महाभारत काल के लगभग डेढ़ सहस्त्र वर्ष बाद भारत में अन्धकार युग प्रारंभ हुआ। भारत के सम्राट अशोक द्वारा कलिंग युद्ध में बौद्ध धर्म अपनाते हुए क्षत्रिय धर्म से वैराग्य लेने से भारत की उत्तरी पश्चिमी सीमाओं की सुरक्षा में शिथिलता आ गई।

12वीं शताब्दी से अरबी, फारसी आक्रमणों के साथ बाहरी सभ्यता के आगमन से वैदिक जीवन पद्धति में धार्मिक शिक्षण व आचरण का प्रभाव बढ़ने लगा। अनेक सभ्यताओं व संस्कृतियों के खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार, का भारतीय जीवन पद्धति में योग बढ़ता रहा किन्तु ऐसी अनेक धार्मिक पद्धतियाँ भी जुड़ गई जैसे तंत्र-मंत्र, प्रेत पूजा, बलि प्रथा आदि जो हिन्दू शास्त्रों व सदाचारों के विरुद्ध होते हुए भी लोगों के आजीविका एवं लाभ पाने का माध्यम बन गई। भारतीय आध्यात्मिक जीवन पद्धति में धार्मिक विकृतियों के कारण हिन्दू संस्कृति अंधविश्वास-आडम्बर युक्त तथा रूढ़िवादी परम्पराओं के रूप में प्रचारित होने लगी। अनेक धार्मिक प्रचलनों में भारतीय जीवन पद्धति को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये जैन, बौद्ध, सिख आदि अनेक पंथों का अभ्युदय हुआ और इस्लाम सहित सभी पंथ व संस्कृतियाँ भारत की विशाल सनातन संस्कृति के समुद्र में समाहित होती चली गई। समाज में कार्य विभाजन एवं कार्य-कौशल को पारिवारिक व्यवसाय के रूप में उन्नत करने तथा सामाजिक समरसता बनाये रखने पर आधारित भारतीय जीवन पद्धति की वर्ण व्यवस्था मध्य काल तक धीरे धीरे जाति प्रथा में बदल गई।

मुगल साम्राज्य के निरन्तर विस्तार एवं

स्थायित्व का शिक्षा के साथ समाज के सांस्कृतिक मूल्यों पर भी गहरा प्रभाव पड़ा। कबीर, नानक, रहीम आदि संतों के प्रभाव से अनेक पंथों का विकास हुआ और उनका भारतीय संस्कृति में समावेश हुआ। विभिन्न धार्मिक मतों द्वारा प्रचलित जीवन पद्धति में प्रवृत्ति और निवृत्ति के मार्गों के बीच भटकते समाज को महर्षि दयानन्द सरस्वती के पुनः 'वेदों की ओर लौटो' वाक्य ने सभी संस्कृतियों के समन्वित मार्ग की दिशा प्रदान की।

18वीं शताब्दी में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी ने भारतीय जीवन पद्धति को समूल नष्ट करने के लिये गुरुकुल बन्द करवा दिये और भारतीयों को षडयंत्रपूर्वक अंग्रेजी शिक्षण द्वारा जीवन मूल्यों से रिक्त कर भौतिकतावादी और उपभोक्तावादी जीवन पद्धति की ओर प्रवृत्त कर दिया।

20वीं सदी के मध्य में भारत जब ब्रिटिश औपनिवेशिकता से मुक्त हुआ तब तक पाश्चात्य देशों में औद्योगिक क्रांति से हुए आर्थिक विकास की तुलना में भारत पिछड़ गया था। भारत में 150 वर्षों से प्रचलित ब्रिटिशकालीन मैकॉले शिक्षण पद्धति के कारण क्षतिग्रस्त वैदिक ज्ञान-विज्ञान व प्रौद्योगिकी को उन्नत करना संभव नही था। स्वतंत्र भारत में भारतीय आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा व्यवस्था एवं शिक्षण पद्धति में आमूलचूल परिवर्तन करना था, परन्तु तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों और ब्रिटिश प्रभाव से युक्त राजनैतिक नेतृत्व के कारण संभव नही हो सका। स्वतंत्रता के 70 वर्षों के बाद भी भारत में मैकॉले शिक्षण प्रद्धति के अनुकरण से युवा पीढ़ी जीविका प्राप्त करने के योग्य तो बनती है किन्तु व्यक्तित्व निर्माण द्वारा समाज व राष्ट्र के निर्माण में कोई योगदान नही कर पाती। ऐसी संस्कार विहीन शिक्षण पद्धति के दूरगामी प्रभाव आज सम्पूर्ण समाज के सभी क्षेत्रों में दिखाई पड़ते हैं। तथाकथित शिक्षित किन्तु भारत के इतिहास में अनभिज्ञ कलाविद् भारत की वीरांगनाओं की गौरवगाथा को मनोरंजन का माध्यम बनाकर आने वाली पीढ़ियों को दिग्भ्रमित कर रहे हैं। पाश्चात्य जीवन पद्धति का अंधानुकरण कर रही आधुनिक पीढ़ी को भारत के साहित्य व इतिहास का तथ्यों सहित ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए तभी वे भारतीय सभ्यता व संस्कृति पर गर्व करेंगे।

भारतीय संस्कृति अनेक सभ्यताओं और संस्कृतियों का समन्वय करते हुए आज भी अक्षुण्ण बनी हुई है, क्योंकि वैदिक शिक्षण से सम्बद्ध जीवन पद्धति में व्यवस्थित ज्ञान की जड़ें हजारों वर्षों पूर्व समाज की गहराई तक व्याप्त थी। वैदिक शिक्षण पद्धति में आत्म साक्षात्कार द्वारा सत्य की खोज और प्रकृति के रहस्यों को भेदने की अपार क्षमती थी। यही विशुद्ध ज्ञान, वैदिक ऋचाओं में जीवन के सत्य के रूप में उद्धृत किया गया था जो आज भी सम्पूर्ण विश्व के वैज्ञानिकों द्वारा खोज व अनुसंधान का वैज्ञानिक आधार बना हुआ है। विश्व के प्राचीनतम वेद-ऋग्वेद में आज के कॉपरनिकस के सिद्धान्त का वर्णन दिया गया था जिसके अनुसार पृथ्वी सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करती है। जर्मनी द्वारा खोजे गये जल में भी जीवन हैं मन्त्र का मूल वेदों ने नदियों को दैविक स्वरूप प्रदान कर जलपूजन के रूप में व्यक्त किया था। सम्पूर्ण सृष्टि के कल्याण को वेदों में जीवनदायी वृक्षों तथा जीवों के पूजन की परंपरा के रूप में स्थापित किया गया था जो आज जैविक संपदा के संरक्षण के रूप में ज्ञात किया गया है। भारतीय नववर्ष की प्राचीन परंपरा तात्कालिक ब्रह्माण्डीय अन्वेषण के उन्नत खगोलशास्त्र की पुष्टि करती है। परन्तु यह आश्चर्यजनक है कि वर्तमान शिक्षा के पाठ्यक्रमों में भारतीय गौरवशाली अतीत के ज्ञान विज्ञान सम्बंधी सभी पृष्ठ नदारद है तथा वर्तमान भारतीय पीढ़ी इससे अनभिज्ञ भी है।

भारतीय परंपराओं की वैज्ञानिकता और शाश्वत मूल्यों पर आधारित वैदिक जीवन पद्धति के कारण ही भारत में भिन्न भिन्न संस्कृतियाँ एक सूत्र में बँधी हुई है। धार्मिक संकीर्णता और हठधर्मिता से परे आज भी वैदिक संस्कृति ही प्रत्येक भारतवासी को अनुप्राणित करती है। सम्पूर्ण जगत को बंधुत्व भाव से जोड़ लेने वाली सनातन वैदिक संस्कृति ही हिन्दुत्व का पर्याय बन गई है। भारत वर्ष में कालातीत व वैदिक कालीन जीवन पद्धति ही भारतीय संस्कृति की पोषक रही है।

रवीन्द्र नाथ ठाकुर के शांति निकेतन, गाँधी आश्रम, पांडेचरी के अरविंद आश्रम और इवान इलिच के स्कूल रहित शिक्षण में शिक्षा के साथ संस्कार प्रदान करने के प्रयास किये गये। इन्हें आगे बढ़ाते हुए आधुनिक शिक्षण में पुनः भारतीय संस्कृति को जीवन्त करने की आवश्यकता है। वैदिक शिक्षण पद्धति पाठ्यचर्या का ही नहीं, विद्यार्थी की दैनिक जीवनचर्या का हिस्सा बन सके। उन्हें वेद-वेदांगों में समाये अतुलित ज्ञान की सम्पदा को जानने का अवसर मिले। मातृभाषा में शिक्षण द्वारा ही विद्यार्थी अपनी पुरातन जीवन पद्धति को आत्मसात करता है। वैदिक अध्ययन व आध्यात्मिक चिन्तन मनन की प्रक्रिया द्वारा विद्यार्थी की सोच को नई दिशा मिलेगी तथा प्राचीन विज्ञान प्रौद्योगिकी में खोज व अन्वेषण के द्वारा ज्ञान का मार्ग प्रशस्त होगा। विद्यार्थी भारतीय ग्रंथों के शिक्षण द्वारा मनुष्य के जीवन में कर्म और पुरुषार्थ का महत्त्व पहचानेंगे तभी अपने कर्तव्यों का निर्वहन करेंगे। संस्कारित युवाओं के आध्यात्मिक लक्ष्य का निर्धारण होगा तथा उनमें आत्मविश्वास व स्वविवेक जाग्रत होगा। जीवन पद्धति द्वारा संस्कार व राष्ट्रीयता का भाव देने में सक्षम शिक्षा ही सार्थक होगी। ❑

(एसोसिएट प्रो.-रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर)

नियमितता का सबसे बड़ा उदाहरण प्रकृति है। प्रकृति ने सभी को नियमों में बाँध रखा है। सूर्य व चन्द्रमा के उदय एवं अस्त होने का एक नियम है, जिससे इस सृष्टि की सभी व्यवस्थाएँ बनी हुई हैं। सूर्य की नियमितता से ही रात-दिन बनने का चक्र निर्धारित हैं। सभी खगोलीय पिण्डों की नियमित गति से इस भूमण्डल पर सब सही है और आपसी टकराहट नहीं होती। यदि एक भी ग्रह की गति में अनियमितता आ जाये तो इसके परिणाम अत्यन्त भंयकर हो सकते हैं। मनुष्य के लिए भी नियमितता जीवन में अपरिहार्य है। नियमितता सभी के जीवन में आवश्यक है चाहे वह अध्ययन करने वाला छात्र हो, देश की रक्षा करने वाला सैनिक या कृषि करने वाला किसान। यदि कहीं भी जीवन में नियमितता का थोड़ा सा भी अभाव आया तो सभी व्यवस्थाएँ ही परिवर्तित हो जाती हैं। नियमितता को सफलता का मूल मन्त्र कहा जा सकता है।

नियमित जीवन व आहार-विहार-विज्ञान

❑ डॉ. सुमन बाला

नियमितता जीवन का आधार है। हमारे चारों तरफ का कोई भी क्षेत्र ले लीजिए, यदि उसमें नियमितता का अभाव दृष्टिगोचर होता है, तो उसमें उसी के अनुसार समस्याएँ भी उत्पन्न हो जाती हैं। उदाहरण के तौर पर हम शिक्षा के क्षेत्र को ही लें तो ऐसी कोई भी शिक्षण-संस्था नहीं मिलेगी जिसके कार्य में नियमितता न हो और वह अपने क्षेत्र में अग्रणी न हो। यदि कहीं भी हम नियमित कार्यशैली का अभाव देखते हैं तो वहाँ समस्याएँ भी अधिक होंगी। यदि किसी शिक्षण संस्था में अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों का कुछ प्रतिशत भी अनियमित होगा तो इसके कारण अध्यापक, व्यवस्थापक और अभिभावक भी इससे परेशान होंगे। यदि हमारी दिनचर्या में नियमितता नहीं है तो हम व्यवस्थित होकर कोई भी कार्य सही प्रकार नहीं कर सकते और इस प्रकार किये गये कार्यों में गुणवत्ता के विषय में तो सोच भी नहीं सकते। नियमितता हमारे सोचने, समझने और कार्य करने का श्रेष्ठ ढ़ँग है, जिससे हम नियमों के नियन्त्रण में रहकर या संयमपूर्वक रहकर कार्य को करते हैं। इस तरह यदि जीवन में नियमितता है तो जीवन व्यवस्थित है।

नियमितता का सबसे बड़ा उदाहरण प्रकृति है। प्रकृति ने सभी को नियमों में बाँध रखा है। सूर्य व चन्द्रमा के उदय एवं अस्त होने का एक नियम है, जिससे इस सृष्टि की सभी व्यवस्थाएँ बनी हुई हैं। सूर्य की नियमितता से ही रात-दिन बनने का चक्र निर्धारित हैं। सभी खगोलीय पिण्डों की नियमित गति से इस भूमण्डल पर सब सही है और आपसी टकराहट नहीं होती। यदि एक भी ग्रह की गति में अनियमितता आ जाये तो इसके परिणाम अत्यन्त भंयकर हो सकते हैं। प्रकृति अपना सम्पूर्ण कार्य (मौसम व ऋतुओं में परिवर्तन) नियमों के अनुसार ही करती हैं। मनुष्य द्वारा अविवेकपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से प्रकृति के चक्र में आया जरा सा ऋतु- परिवर्तन या जलवायु परिवर्तन (अनियमितता) मानव जाति के लिए भयंकर विनाशकारी प्राकृतिक आपदाओं का कारण बन रहे हैं। इस तरह हम देखते हैं कि अनियमितता के दुष्परिणाम तुरन्त हमारे सामने आ रहे हैं जो सृष्टि और उसमें संचारित जीवन की लयबद्धता के विध्वंस का कारण बनते हैं।

मनुष्य के लिए भी नियमितता जीवन में अपरिहार्य है। नियमितता सभी के जीवन में

आवश्यक है चाहे वह अध्ययन करने वाला छात्र हो, देश की रक्षा करने वाला सैनिक या कृषि करने वाला किसान। यदि कहीं भी जीवन में नियमितता का थोड़ा सा भी अभाव आया तो सभी व्यवस्थाएँ ही परिवर्तित हो जाती हैं। नियमितता को सफलता का मूलमन्त्र कहा जा सकता है। जिस प्रकार सृष्टि व समाज को सही रूप से चलने के लिए नियमितता आवश्यक है, उसी प्रकार व्यक्ति के जीवन में भी नियमितता अत्यन्त आवश्यक है। जिस प्रकार समाज में मर्यादा और अनुशासन के बिना काम नहीं चल सकता उसी प्रकार मनुष्य के लिए जीवन में भी नियमितता के अभाव में अच्छा जीवन जीना असंभव है। मनुष्य को न केवल कार्य-व्यवहार बल्कि आहार-विहार में भी नियमित होना आवश्यक है। आहार-विहार की नियमितता उसकी शरीर की कार्यप्रणाली की व्यवस्था को चुस्त-दुरुस्त रखने के लिए आवश्यक है। यदि व्यक्ति अपने खान-पान के समय में भी परिवर्तन करता है तो इसका प्रभाव उसके सम्पूर्ण शारीरिक तन्त्रों पर तो पड़ता ही है, साथ-साथ उसके व्यवहार पर भी इसका प्रभाव स्पष्ट नजर आता है। दैनिक जीवन के खान-पान के साथ उसकी सोने, जागने, कार्य करने की क्रियाएँ जुड़ी हुई हैं, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव शारीरिक स्वास्थ्य के साथ-साथ मानसिक स्वास्थ्य पर भी पड़ता है। यदि व्यक्ति के जीवन में आहार की नियमितता है, तो इससे जुड़ी सभी क्रियाएँ सुचारू रूप से होती हैं और व्यक्ति शारीरिक रूप से स्वस्थ और प्रसन्नचित्त रहता है और उसका मानसिक स्वास्थ्य भी सही रहता है। व्यक्तियों का मानसिक स्वास्थ्य सही होने से ही समाज सही रहता है।

वर्तमान समय में आधुनिकता और अनुकरण की अंधी दौड़ में आहार की नियमितता और गुणवत्ता दोनों ही प्रभावित हुई हैं। आहार की अनियमितता के कारण दिनों-दिन बीमारियों में बढ़ोतरी होती जा रही है। प्रकृति के प्रतिकूल आहार और असमय लिया जाने वाला आहार शरीरतन्त्र के साथ सन्तुलन नहीं बिठा पाता है और शरीर अनेक बीमारियों का घर बनता जाता है। आज बालक से लेकर किशोर और प्रौढ़ इन व्याधियों के शिकार होते जा रहे हैं। आहार का भी एक विज्ञान है, उसी के अनुसार हमें सही समय पर भोजन और दैनिक क्रियाकलाप करने चाहिए। हमारी जैविक घड़ी अनियमितता के कारण गड़बड़ा जाती है, जिससे कई रोग उत्पन्न हो जाते हैं। असमय और अनियमित आहार से हमारे शरीर के केन्द्रों की लयबद्धता प्रभावित होती है।

इस पृथ्वी पर पाये जाने वाले सभी जीवधारियों में 24 घण्टे के समय-चक्र में जैव रासायनिक, शरीर क्रियात्मक एवं व्यावहारिक प्रक्रियाओं में लयबद्ध परिवर्तन घटित होते रहते हैं। इसे जैविक घड़ी या (Ciradian-Rhythan) कहते हैं। इस लय का नियन्त्रक केन्द्र (Master clock) मस्तिष्क के हाइपोथेलेमस भाग में स्थित होता है जो आँख, मस्तिष्क, हृदय, फुफ्फुस, पाचनतन्त्र, यकृत, गुर्दे आदि शरीर के अन्य क्षेत्रों की कोशिकाओं में स्थित परिसरीय केन्द्रों से लयबद्धता बनाए रखता है। शरीर की स्वत: निर्मित यह लय बाहरी उद्दीपकों से भी प्रभावित होती है, जैसे आहार, तापमान आदि। किन्तु बाहरी उद्दीपकों में सबसे प्रभावी होती है सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति और अनुपस्थिति जो नियन्त्रक केन्द्र (Master clock) को प्रभावित कर बाकी सभी केन्द्रों को भी लयबद्ध रखती

है। प्रातः काल सूर्योदय होने पर प्रकाश को आँख के परदे पर स्थित विशिष्ट ग्राही क्षेत्रों द्वारा ग्रहण किया जाता है और यहाँ से इसके संवेग हाइपोथेलेमस स्थित नियन्त्रक केन्द्र तक पहुँचते हैं। वहाँ से पिनियम ग्रंन्थि को सन्देश पहुँचते हैं और मेलाटोनिन नामक हारमोन का स्त्राव कम होने लगता है। यह हार्मोन सोने और जागने की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रकाश की अनुपस्थिति (रात्रि) में इसका अधिकतम स्त्राव होता है और प्रकाश की उपस्थिति (दिन) में न्यूनतम। जब हमारा शरीर दैनिक प्रकाश-अन्धकार के क्रमबद्ध चक्र से गुजरता है तब कुछ तन्त्रकीय रसायनों और हारमोन्स के स्त्राव में क्रमबद्ध परिवर्तन होते हैं जिसमें सोना-जागना, शारीरिक तापमान और रक्तचाप, चयापचय आदि से सम्बन्धित आवश्यक परिवर्तन घटित होते हैं। नियन्त्रक केन्द्र द्वारा पिट्यूटरी, पिनियल, एडरिनल तथा थायराइड़ ग्रंन्थियों से हार्मोन स्त्राव प्रभावित होता है, जैसे प्रातः प्रकाश होने पर तनाव से लड़ने में सहयोगी कार्टीसोल, तन्त्रिकीय संवेग नियन्त्रक सिरोटोनिन, चित्त शांत करने वाला गाबा और सतर्कता देने वाला डोपामिन, आदि हारमोन का स्तर बढ़ जाता है। ऐसे ही रात्रि में प्रकाश की अनुपस्थिति में मेलाटोनिन, रक्तचाप नियन्त्रक हार्मोन तथा उपापचय और जीर्णोद्धार नियन्त्रक ग्रोथ हारमोन आदि का स्त्राव बढ़ जाता है। अनियन्त्रित दिनचर्या जीने वाले या जीने को विवश लोगों में यह लय गडबड़ा जाती है और उनके निद्रा सम्बन्धी रोग तथा उपापचय विकृति जैसे - मधुमेह, मोटापा आदि से ग्रस्त होने की सम्भावना बढ़ जाती है। इसीलिए जल्दी सोने और जल्दी जागने, समय पर भोजन करने, सही मात्रा में भोजन करने तथा दिनचर्या को नियमित रखने के नियम बनाए गए हैं।

नियम से आहार-विहार के विषय में गीता के छठे अध्याय के सोलहवें श्लोक में श्री कृष्ण कहते हैं कि-

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः।
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैवचार्जुन।।

अर्थात् हे अर्जुन 'योग न तो अधिक खाने वाले का और न ही बिल्कुल न खाने वाले का तथा न अधिक सोने वाले का और न ही बिल्कुल न सोने वाले का ही सिद्ध होता है। अधिक खाने से या भूख के बिना खाने से प्यास अधिक लगती है और पानी अधिक पीना पड़ेगा, जिससे पेट भारी होगा, आलस्य होगा, काम करने में मन नहीं लगेगा। बिल्कुल न खाने से भी शरीर में शक्ति कम हो जायेगी और कार्य करना कठिन होगा। श्री कृष्ण सत्रहवें श्लोक में कहते हैं कि-

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।

अर्थात् 'दुखों का नाश करने वाला योग तो यथायोग्य आहार और विहार करने वाले का, कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करने वाले का तथा यथायोग्य सोने और जागने वाले का ही सिद्ध होता हैं। आहार और विहार नियमानुसार ही होना चाहिए। भोजन उतना ही किया जाए जितना सुगमतापूर्वक पच सके। व्यायाम, योगासन भी नियमानुसार सही मात्रा में किया जाये। कर्म भी यथोचित चेष्टा से किये जाएँ। सोना-जागना भी सही नियम से हो। इस प्रकार यथोचित आहार, विहार आदि करने वाले योगी का दुःखों का अत्यन्त अभाव करने वाला योग सिद्ध होता हैं।

विज्ञान और अध्यात्म हमें बताते हैं कि जीवन में नियमितता का अभाव होने से स्वस्थ और सुखी जीवन असंभव है। नियमित जीवन द्वारा ही किसी भी लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। नियमित दिनचर्या से जीवन को सुखी व सरल बनाया जा सकता है। जीवन की नियमितता ही एक सफल, संस्कारी, मर्यादित और संयमित व्यक्तित्व का निर्माण करती हैं। आने वाली पीढ़ियों को नियमित जीवन जीना सिखाने के लिए माता-पिता के साथ-साथ अध्यापकों की भी महती भूमिका है। नियमित जीवन का पाठ बाल्यकाल से ही सिखाया जा सकता है। नियमितता की महत्ता जीवन के प्रत्येक काल और क्षेत्र में अनिवार्य है चाहे वह बाल्यावस्था हो या वृद्धावस्था। व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन की समस्याओं से बचने और छुटकारा पाने का एक ही उपाय है,वह है नियमित जीवन जीना। आवश्यकता इस बात की है कि नियमितता व मर्यादा हमारे जीवन का मुख्य हिस्सा बने। यह भावना हर एक के अंतर्मन में प्रस्फुटित करके उसके जीवन व समाज को आलोकित करें। ❑

(व्याख्याता, हरिभाऊ उपाध्याय महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, हटूण्डी (अजमेर)

Four Ashrams in human life

❑ Dr. TS Girishkumar

Bharatiya knowledge tradition closely observes both man and the cosmos in inter connectivity and brought out many instructions for legitimate and appropriate existence, through knowing, through an appropriate education pattern. In one sentence, it could be stated that for Bharat, everything begins from the Vedas andeverything is aimed at Moksha. In this context, one could discuss about "Yama" and "Niyama"before going into the four Ashramas of human existence, as the four ashramas in life are actually patterned through Yama and Niyama as well as the Purusharthas.

Bharatiya knowledge tradi tion, Bharatiya Sanskriti, and Bharatiya Parampara itself always stood out as unique. The fact that the world is still not giving the due to Bharat may only be from their not knowing what Bharat is. Perhaps it is not available to them on common place to get impact made for which our responsibility also shall not be less; perhaps they are not interested in heeding to the others and not listening; or perhaps they are not yet prepared – equipped to 'realise' the cultural refinement of Bharat from their respective cultural lag. Bharatiya knowledge tradition closely observes both man and the cosmos in inter connectivity and brought out many instructions for legitimate and appropriate existence, through knowing, through an appropriate education pattern. In one sentence, it could be stated that for Bharat, everything begins from the Vedas and everything is aimed at Moksha. In this context, one could discuss about "Yama" and "Niyama"before going into the four Ashramas of human existence, as the four ashramas in life are actually patterned through Yama and Niyama as well as the Purusharthas.

Yama and Niyama

Yamas are recommended activities by Dharma Shastras for authentic living, eventually leading to the ultimate desideratum in human existence, Moksha. It gives instructions toward disciplining of both mind body apart from speech and action to co-exist with the cosmos without making any disturbance causing any sort of imbalance in anything.

Niyamas become duties to perform that eventually leads to Moksha through a fruitful human existence. On the basis of Yoga Sutra by Maharishi Patanjali, there are five Niyamas. They are 1) Shaucha implying purity of body, mind, thought, speech and action. 2) Santosha, meaning contentment, happiness, sense of fulfilment in whatever and however.

3) Tapas imply self-discipline, composed existence, temperance as well as contemplation and reflection on everything whatever as the case may be. 4) Swadhyaya mean self-study of whatever as per the requirement and reflection upon knowledge that has been gathered. 5), the fifth Niyama, Iswara pranidhana is to direct oneself towards the ultimate reality eventually, as to become one with Brahman that always remains the end goal. Thoughts concerning Ishwar is an instrumental phenomenon to the final destination.

In Maharishi Patanjali, though there are five Niyamas, some other texts suggest different numbers of Niyamas. For example, Sadhanapada says that there are Six Niyamas. Shantiliya and Varuha Upanishads says that the Niyamas are Ten in number. There are some Sixty-Five texts discussing Yama and Niyama from ancient Bharat and Medieval Bharat. With the establishment of Buddhist Universities, further work was done by the Buddhist Acharyas and they too enriched the quest.

Yama and Niyama are those designed to make human existence authentic physically, mentally, emotionally and spiritually. This phenomenon eventually leads us to the concept of four ashramas of human existence. Ashrama literally mean hermitage, but here it just means stage. This makes the four ashramas of human life as four stages of existence. The period of each ashrama is counted on the basis of the postulate that total human life span is one hundred years. Four ashramas are divided equally into four parts of twenty-five years each.

Four Ashramas

Discussions about the four ashramas are found in Vaikhanasa Dharma shastra and in other dharma shastras. They are Brahmacharya, Grihasta, Vanaprastha and Sanyasa.

Brahmacharyashrama

Brahmacharyashrama shall be for 24 to 25 years of age. Entry to this ashrama shall be at the age of nine to ten, and the first thing at entry is the Upanayana of the pupil. Samavarta shall only be at the exit, say, at the age of 24 or 25. Perhaps this is the most important stage in human life as the stage that is equipping one, enabling one, and developing all his inner potentialities. All kinds of teaching are done in this stage to train one physically, mentally, emotionally and spiritually. Normally the pupil stays with the Guru in the Gurukul, where all pupils perform most activities jointly. Gurudakshina, let us call it tuition fees in modern language, is done through the pupil working for the Gurukul, mostly by way of looking after cattle breed, farming and

running the bhojanalay,

Grihasthashrama

After Samavarta at the Gurukul, one returns home as an educated man. He shall then get married and becomes a Grihastha to live a common man's life. He puts his knowledge and abilities for the better being of not only his family, but also for the society and his Nation. This is the stage for socially existing, making co-existence with the cosmos itself. He shall involve himself in every activity of the society including questions concerning social engineering and Nation building depending on his abilities. Grihasthashrama shall continue till the age of 49 to 50.

Vanaprasthashrama

After the age of fifty, one becomes a Vanaprastha. He is still functional in the usual manner, but shall practice detachment from everything internally. This is a period of cleansing the soul, from all attachments those might have got into ones' inner self. Vanaprastha remains in the home, but shall be more concerned with guiding the youngsters, providing others with guidance, corrections etc. at the same time, he becomes more and more detached of mundane existence devoting more time and energy to spiritual aspects.

Sanyasa

After 75, through practicing Vanaprastha, one shall enter Sanyasa for a life of renunciation. One may even leave his dwelling and go away as a normal course, or one may even practice Sanyasa without immediately quitting his home. The rest of the life in any case is for spiritual existence alone.

The Purusharthas

The Purusharthas are a combination of four Values, which are Dharma, Artha, Kama and Moksha. Artha implies material wealth and possession of material wealth. Material wealth is practically required for meaningful existence. Here, one must have the desire to get material wealth, and that desire is implied by the value Kama. Without Kama, there cannot be Artha. Dharma shall remain as the powerful overbearing phenomenon on every step, for Kama as well as Artha. Once Kama is controlled by Dharma, the desire shall be just legitimate, there shall be no endless desire. With Kama through Dharma, only legitimate Artha comes into the possession as nothing more and nothing less. Once living shall be through the values of Purusharthas, Moksha becomes automatic, without any further efforts. Thus, Purusharthas teach that Kama must be regulated by Dharma, and such regulated Dharma brings only legitimate Artha. Once life is so regulated, one need not do anything separately to attain Moksha, Moksha becomes just automatic.

Purusharthas remain active and operational through all the four ashramas. It is through Purusharthas that in each ashrama one shall live. If this much is done, one need not go for anything else, Moksha just comes in: provided one does not commit any Adharma and that is most unlikely.

Education today

Such used to be the education as designed by Bharatiya Acharyas aimed at authentic man making. The whole thing is complexly interknitted through a complex existence of individual, family, society, Nation, co-existence with the cosmos and it shall all be through Dharma.

With European pattern of education, education is just information providing. There is hardly any 'becoming' phenomenon, the being remains just being without becoming through knowing. Nyayasutra speaks about an essential attribute of knowledge; that is, knowledge should have the property of 'affecting' the knower, affecting, refining and making the knower a Sanskari and Dharmic. In future, this shall take place in Bharat again, of creating Sanskaris and Dharmic individuals who would in turn be instrumental in making a better world.❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

सा विद्या या विमुक्तये

❑ **डॉ. ऋतु सारस्वत**

'**सा** विद्या या विमुक्तये', विद्या वह है जो हमें अज्ञानता और भ्रामक कल्पनाओं से मुक्त करे। जो हमें द्वैत के भाव से, तुम और मैं के भाव से मुक्ति दिलाये। विद्या, दृष्टि देती है, एक ऐसी दृष्टि जो एकात्मकता, समानता और अपनत्व को स्थापित कर हर भेद से मुक्त करते हुए मानवीय मूल्यों की स्थापना करे। इस भाव का आह्वान शताब्दियों पूर्व भारत से हुआ था। यह हमारा दुर्भाग्य है कि आज हम विद्या के वास्तविक स्वरूप से अनभिज्ञ हैं। विराट संस्कृति का पोषक, समस्त विश्व का मार्ग प्रशस्त करने वाला स्वयं किंकर्त्तव्यविमूढ़ है। 'भारत शिक्षित हो रहा है', यह वाक्य स्वयं ही भ्रम है। भारत तो सदैव से ही शिक्षित था परन्तु अब जिस ज्ञान को हम सत्य मान रहे हैं उसका उद्देश्य मात्र जीविकोपार्जन के साधनों को प्राप्त करना है। यह ज्ञान एक ऐसी मृत देह की भाँति है जिसके भीतर आत्मा का वास नहीं है। अनेकानेक वर्षों से भारतीय संस्कृति की धरोहरों को पुरातन कह स्वयं को आधुनिक सिद्ध करने की चेष्टा ने, एक ऐसे मिथक को सर्वत्र व्याप्त किया जिसने सर्वाधिक क्षति बेटियों को पहुँचाई। विदेशी आक्रान्ताओं ने स्वार्थवश धर्मशास्त्रों की खंडित व्याख्याएँ कर विश्व-पटल पर एक मिथक को स्थापित किया कि भारतीय सदैव से ही स्त्रियों को तुच्छ स्वीकारते आये हैं और इस तथ्य की पुष्टि के लिए धर्मशास्त्रों में उल्लेखित मन्त्रों की, श्लोक की अनर्गल व्याख्या की। असत्य इतना घातक नहीं होता जितना की अधूरा सत्य। दु:खद तो यह है कि स्वयं भारतीयों ने अज्ञानतावश उस अधूरे सत्य को सत्य मान स्वीकार किया।

'हमारे ग्रन्थों में स्त्री शिक्षा के अधिकार' को अस्वीकार किया गया है। इस असत्य ने भारत की बेटियों को अपूर्णनीय क्षति पहुँचाई है। क्या यह हमारा नैतिक दायित्व नहीं कि हम इस भ्रामक असत्य से मुक्त होने की चेष्टा करें। हमें यह जानना आवश्यक हो जाता है कि भारतीय संस्कृति स्त्री-समानता और स्त्री-स्वतंत्रता को किस रूप में देखती है। भारतीय संस्कृति की अनमोल धरोहर वेदों के पृष्ठों को जब हम पलटते हैं तो शनै: शनै: स्वत: ही भ्रम का हर स्वरूप दूर होता चला जाता है। **'तेऽवदम् प्रथमा ब्रह्मकिल्विषेऽकूपारः सलिलो मातरिश्वा। वीडुहरास्तप उग्रमयो भूरापो देवीः प्रथमजाः मृतस्य।।** (ऋ 10/109/1, अथर्व 5/7/1) अर्थात् आरम्भ में परमेश्वर द्वारा सृष्टि उत्पत्ति के पुण्य कार्य की, समाज/संसार की अवनति को

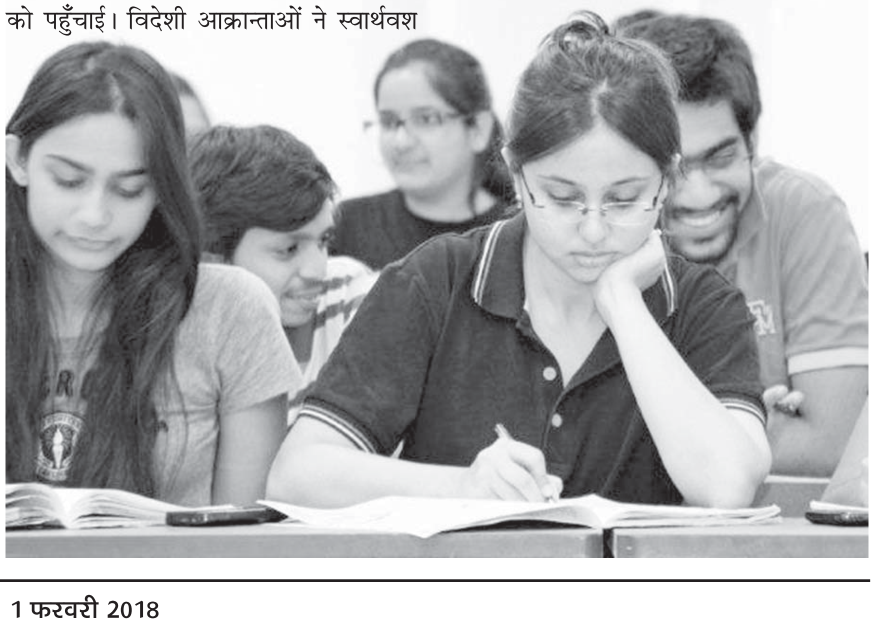

भारत तो सदैव से ही शिक्षित था परन्तु अब जिस ज्ञान को हम सत्य मान रहे हैं उसका उद्देश्य मात्र जीविकोपार्जन के साधनों को प्राप्त करना है। यह ज्ञान एक ऐसी मृत देह की भाँति है जिसके भीतर आत्मा का वास नहीं है। अनेकानेक वर्षों से भारतीय सस्कृति की धरोहरों को पुरातन कह स्वयं को आधुनिक सिद्ध करने की चेष्टा ने, एक ऐसे मिथक को सर्वत्र व्याप्त किया जिसने सर्वाधिक क्षति बेटियों को पहुँचाई। विदेशी आक्रान्ताओं ने स्वार्थवश धर्मशास्त्रों की खंडित व्याख्याएँ कर विश्व-पटल पर एक मिथक को स्थापित किया कि भारतीय सदैव से ही स्त्रियों को तुच्छ स्वीकारते आये हैं और इस तथ्य की पुष्टि के लिए धर्मशास्त्रों में उल्लेखित मन्त्रों की, श्लोक की अनर्गल व्याख्या की। असत्य इतना घातक नहीं होता जितना की अधूरा सत्य। दु:खद तो यह है कि स्वयं भारतीयों ने अज्ञानतावश उस अधूरे सत्य को सत्य मान स्वीकार किया।

रोकने के लिए, परमेश्वर ने प्रथम उत्पन्न कन्या की आवश्यकता प्रतीत की, श्रुत द्वारा सम्पन्न इसके लिए सृष्टि उत्पन्न करने वाले परमेश्वर के प्रतिनिधि, आदित्य, सलिल और वायु में मन्त्रणा की, वेद के अनुसार, तप द्वारा अर्जित बलवानों की उग्रता को, उग्र पापाचारी शक्ति को हरने के लिए, उनकी उग्रता को शांत करने के लिए, जल की शीतलता जैसे गुणों से संसार में सुख प्रदान करने के लिए, परमेश्वर ने देवी प्रथम में कन्या रूपी देवी को बनाया।

स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति ने स्त्री को प्रथमा: स्वीकारा। उसे राक्षसों की उग्रता को शांत करने वाली शक्तियों से सम्पन्न माना। कन्या जन्म, धरा के पल्लवन के लिए अपरिहार्य था। कन्याओं के अस्तित्व की अस्वीकारना, उनको क्षति पहुँचाने की चेष्टा, देश और समाज के लिए अहितहारी मानी गयी। अथर्ववेद में उल्लेखित है, **'ये गर्भा अवद्यन्ते जगद् यच्चापलुप्यते वीरा ये तृह्यन्ते मिथे ब्रह्मजाया हिनस्ति तान्।।** (अथर्व 5/17/7)। क्या हम इस सत्य को सहजता से स्वीकार करेंगे कि समाज में व्याप्त अराजकता का मूल कारण, हमारे स्वयं के कृत्य हैं। देश का संभ्रांत व तथाकथित शिक्षित वर्ग, गर्भ में कन्याओं का जीवनहंता बना, पर ये हमारी संस्कृति को कदापि स्वीकार्य नहीं था। स्वार्थजनित मानवों ने नारी जीवन को संघर्ष की एक ऐसी यात्रा में परिवर्तित कर दिया है कि जीवन का हर पड़ाव उनके लिए चुनौती बन चुका है। इस धरती पर जन्म लेना ही बेटियों के लिए स्वयं में चुनौती है और अगर जन्म हो भी जाये तो स्नेह एवं सम्मान पाना दुष्कर है, क्या यही भारत की परम्परा रही है? इस प्रश्न का उत्तर स्मृतियों से लेकर मनुस्मृति में ढूँढा जा सकता है। स्मृतियों में कन्या उपेक्षित नहीं वरन् स्नेह एवं सम्मान योग्य समझी गयी है।**'दातारो नोऽभिवर्धन्तां वेदाः सन्ततिरेव च। श्रद्धा च नो मा व्यगमदद्धहुदेयं च नोऽस्त्विति'**।। (मनु. 3/259)। बृहत्पाराशर स्मृति में कहा गया **'यथैवात्मा तथा पुत्र पुत्रेण दुहित समा।।** (9/30) साथ ही यह भी कहा गया है**'पिता स च वै पुत्रस्तत्समा दुहिताऽपि च। पुत्रश्च दुहित चो भौ पितुः सन्तानकारकौ।** (6/200) अर्थात् पुत्र और पुत्री दोनों एक ही पिता की संतान होने के कारण समान हैं। मनु और याज्ञवल्क्य ने कन्या के लालन-पालन को बड़े सुंदर ढंग से करने की बात कही है तथा यह भी कहा है कि जो पिता या भाई धन-धान्य की कामना करते हैं, उन्हें कन्या का आदर एवं सदा अलंकृत करना चाहिए। (3/55-59, 3/57, 58)। मनु, कन्या को अत्यन्त कृपा का पात्र मानते हैं। कन्या जन्म पुण्यः प्रताप के रूप में स्वीकार किया गया। पुत्र और पुत्री के मध्य कोई भेद नहीं था। स्त्री-शिक्षा उसी भाँति होती थी जिस तरह पुत्रों को शिक्षा दी जाती थी। स्त्रियाँ केवल सामान्य अध्ययन ही नहीं करती थीं अपितु वेद, व्याकरण, मीमांसा आदि उच्च कोटि के विषयों को भी पढ़ती थीं। यही नहीं कुछ स्त्रियाँ आचार्या होकर पुरुषों को भी पढ़ाती थीं। महाभाष्य से विदित होता है कि मीमांसादर्शन जैसे कठिन विषय को भी स्त्रियाँ पढ़ती थीं। 'द्विविद्याः स्त्रियाः। **ब्रह्मवादिन्य सद्योवध्वश्च। तत्र ब्रह्मवादिनीनामुपनयनम्, अग्रन्धनं वेदाध्ययनं स्वगृहे च भिक्षाचर्येति। सद्योवधूनां तूपस्थिते विवाहे कथञ्चि-दुपनयनमात्रं कृत्वा विवाहः कार्यः हारित (धर्म सूत्र)** अर्थात् ब्रह्मवादिनी और सद्योवधू ये दो स्त्रियाँ होती हैं। इनमें से ब्रह्मवादिनी - यज्ञोपवीत, अग्निहोत्र, वेदाध्ययन तथा स्वगृह में भिक्षा करती हैं। सद्योवधुओं का भी यज्ञोपवीत आवश्यक है।

आश्वलायन गृह्य सूत्र 1/1/9 के 'पाणिग्रहणादि गृह्य.......' में यजमान की अनुपस्थिति में उसकी पत्नी, पुत्र अथवा कन्या को यज्ञ करने का आदेश है। काठक गृह्यसूत्र 3/1/30 एवं 27/3 में स्त्रियों के लिए वेदाध्ययन, मन्त्रोच्चारण एवं वैदिक कर्मकाण्ड करने का प्रतिपादन है।

वेदों में स्त्रियों को सदा विशयिनी के रूप में प्रतिपादित किया गया है। गोमिला सूत्र में कहा गया है कि **'यज्ञोपवीत नीमभ्युदानयुत् जपेत् सोभादद् गन्धर्वाय गोभिल।'** इस श्लोक के माध्यम से यह तथ्य पुष्ट होता है कि स्त्रियों के भी उपनयन संस्कार होते थे वे भी यज्ञोपवीत धारण करती थीं। शिक्षा ही नहीं, वे शासक और रक्षक चुनने की अधिकारिणी थीं। पाणिनी से ज्ञात होता है कि स्त्रियों को राजनीतिक अधिकार पुरुषों के समकक्ष प्राप्त थे। भारतीय राजतंत्र में पट्टमहादेवी या महिषी की वैधानिक स्थिति थी। राजा के साथ उसका भी सिंहासन महाभिषेक किया जाता था। स्त्री और पुरुष दोनों को समान रूप से शासक चुने जाने का अधिकार था। भारतीय संस्कृति ने नारी-जीवन को देवी तुल्य स्वीकार्य किया और उनके सहयोग से, समस्त सृष्टि के विकास की कल्पना की परन्तु यह समस्त सत्य, अधूरे असत्यों की गूँज के बीच, विलुप्त होते प्रतीत होते हैं। वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों में उल्लेखित, जीवन मूल्यों को अगर हम आत्मसात करेंगे तो इस धरा के स्त्रीहंताओं को यह बोध होगा कि उनके द्वारा जो अन्याय हुए हैं वह कभी भी भारत की संस्कृति नहीं थी। भारत, मनुष्य और मनुष्य के मध्य किसी भी भेद को न पूर्व में स्वीकारता था न अब स्वीकारता है। परन्तु प्रश्न एक ही है कि यह सत्य समस्त विश्व में आलोकित हो। विद्या का वह स्वरूप समस्त दिशाओं में प्रसारित हो जो भारतीय संस्कृति का मूल है, **'सा विद्या या विमुक्तये।'** ❑

(व्याख्याता, राजकीय महाविद्यालय, पुष्कर)

अंतिम व्यक्ति जब स्वयं को सुरक्षित समझे, उसके मन में सत्ता के प्रति शंका और सामाजिक वातावरण में आशंका न हो, ऐसा वातावरण-आचरण हो यह विकास की राजनीति का सबसे मूलभूत तत्त्व है। राजनेता हो या कार्यकर्ता, जन सेवक हो या लोकसेवक सबको कार्य का स्वातंत्र्य हो, विचार-आचरण-कार्यशैली सभी में संवैधानिक निष्ठा जब रहेगी तो राजनीति के प्रति विश्वास बढ़ेगा, विश्वसनीयता आयेगी और यहीं से विकास की राजनीति नयी ऊँचाइयों को छूने के लिए लालायित होगी और हर एक का मन उत्साह से लबरेज होगा कोई वंचित-अगड़ा-पिछड़ा-ऊँचा-नीचा-कमजोर आदि विषय विश्लेषणों से इतर केवल एक नागरिक, सक्षम-सामर्थ्यवान और नागरिक समाज के द्वारा शासन के लिए मार्गदर्शन देने वाला व्यक्तित्व बन पायेगा।

विकास की भारतीय जीवन शैली

❑ आशुतोष जोशी

विकास की राजनीति और राजनीति का विकास दोनों ओर समान रूप से दृष्टिपात करते हैं तो परिणाम ज्ञात होता है की इन शब्दों में लम्बा अंतराल है, भारत की राजनीति में तो यथार्थ रूप में भी। विकास, जो कभी पंचवर्षीय योजनाओं का हिस्सा रहा या कि योजना आयोग, वित्त आयोग और कुछ क्षणिक काल को भी ले ले तो केवल चुनावी जुमला भर। व्यंग्य में भारतीय परिप्रेक्ष्य में, वास्तविकता में विकास यत्र-तत्र-सर्वत्र चलता-फिरता दिखाई देता है, क्योंकि विकास व्यक्ति का नाम है। आम आदमी (सामान्य-जन) की बात करें तो विकास वो एक लक्ष्य है जिसे पाना, चेष्टा करना और उसके लिए प्रेरित होना कुछ कुछ वैसा ही है जैसाकि 'आग का दरिया है डूब के जाना' है।

जीएसटी और नोट-बंदी का निर्णय कोई भी वह राजनैतिक पार्टी नहीं कर सकती, जिसको साल में कई बार चुनाव की बिसात, शह-मात और जनमत के बीच जाकर अपने निर्णय की पुष्टि लेनी हो, यह दीगर बात है की बीते साल में यह सब हुआ, बीता और गुजरा है।

सफलता या कि विफलता को एकदम से कसौटी पर रखना बचकाना प्रयास होगा, कोई भी निर्णय जब अंतिम नागरिक तक को प्रभावित करता है और उसके बाद भी अगर, उसके चेहरे पर शिकन न दिखाई दे तो निर्णय की विफलता को कैसे कोई आप्त-प्रमाण कह सकता है?

सबके अपने-अपने मत हो सकते हैं, तर्क भी। भारत के विकास की अवधारणा मुंडे मुंडे मतिर्भिन्ना से प्रादुर्भूत है सो हर एक वाद से विवाद के जरिए संवाद निकालता है और जहाँ नैतिकता और सर्व-स्वीकार्यता हो तो कुछ आशंका आरम्भतः शून्य हो जाती है ।

विकास की राजनीति में नरेगा की भूमिका और जन धन के जरिए हर एक नागरिक को बैंकिंग से जोड़ने की अप्रतिम सफल योजना का अपना एक महत्त्व है, क्योंकि यह सतत विकास की उस अवधारणा के नजदीकतम है जिसे वर्तमान राजनीतिक शब्दावली में अन्त्योदय शब्द से जोड़ा जा सकता है, अंतिम-जन तक कार्य-योजना का पहुँचना ।

आर्थिक मंदी से आसानी से निकला यह भारत राष्ट्र अपनी जिजिविषा के साथ ही उन पुण्यशाली पीढ़ी को वंदन अवश्य करता है जो

जब मेघ देवता से प्रार्थना करती थी तो पशु, पक्षी और चींटी तक का दे, उसके बाद बचे तो मुझको दे की चिंता करती थी। लोक-संग्रह समाज का संपोषक था तभी तो सामूहिक अवसरों पर प्रत्येक इकाई जुड़ती-जुड़ती सैंकड़ा-हजार और अनगिनत के उस लक्ष्य को आसानी से पा लेती थी तो सर्वकालिक विकास की अवधारणा थी।

विकास की राजनीति में स्थानिकता को महत्त्व मिले, अर्थ का प्रभाव भी न हो और अभाव भी न हो साथ ही साथ विकेंद्रीकरण का शुद्ध भाव हो तो यह अधिक स्वीकार्य होगा और किसी भी प्रकार की अराजकता का प्रश्न याकि कल्पना ही नहीं पनपेगी।

अंतिम व्यक्ति जब स्वयं को सुरक्षित समझे, उसके मन में सत्ता के प्रति शंका और सामाजिक वातावरण में आशंका न हो, ऐसा वातावरण-आचरण हो यह विकास की राजनीति का सबसे मूलभूत तत्त्व है। राजनेता हो या कार्यकर्ता, जन सेवक हो या लोक सेवक सबको कार्य का स्वातंत्र्य हो, विचार-आचरण-कार्यशैली सभी में संवैधानिक निष्ठा जब रहेगी तो राजनीति के प्रति विश्वास बढ़ेगा, विश्वसनीयता आयेगी और यहीं से विकास की राजनीति नयी ऊँचाइयों को छूने के लिए लालायित होगी और हर एक का मन उत्साह से लबरेज होगा कोई वंचित-अगड़ा-पिछड़ा-ऊँचा-नीचा-कमजोर आदि विषय विश्लेषणों से इतर केवल एक नागरिक, सक्षम-सामर्थ्यवान और नागरिक समाज के द्वारा शासन के लिए मार्गदर्शन देने वाला व्यक्तित्व बन पायेगा।

जिस सतत विकास को आज विश्व समग्र रूप में स्वीकार्य कर रहा है, वह सस्टेनेबल डेवलपमेंट हमारे रोजमर्रा जीवन का अटूट हिस्सा रहा है। गाय से लेकर स्वच्छता-संपोषिका तक सबका समान हिस्सा होता था जब घर में भोजन निर्माण होता था, जलापूर्ति-आवास-सर्दी-गर्मी आदि तमाम आवश्यकता की पूर्ति से लेकर जन्म-मरण-परण सभी कर्मों में समाज की भागीदारी समान रूप से रही, थी और है भी। यह पुराने-प्राचीन-अर्वाचीन कुवें-जोहड़े-बाबड़ी-सर-सरोवर-तालाब सब कुछ समाज की ही तो देन है, कार्य है। गर्मी में छाया के पेड़, प्याऊ, सर्दी में रैनबसेरे, कम्बल वितरण तो अभी का, वर्तमान है। यह विकास का भारतीय प्रतिमान हैं ।

गीता में पार्थ कहते हैं कि कौन्तेय।
स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।

अपने अपने कर्म में तत्परतापूर्वक लगा हुआ मनुष्य सम्यक् सिद्धि (परमात्मा) को प्राप्त कर लेता है। सबका कर्तव्य नैतिक तो है ही, संविधान भी उसे परिभाषित करता है, वस्तुतः यह कर्म सिद्धान्त, विकास की भारतीय मनीषा का उद्धरण है।

एक वैचारिक चर्चा में सवाल उठा कि अगर जो व्यक्ति गौकशी करता है, उस पर प्रतिबन्ध हो जाएगा तो उसकी आजीविका-जीवन-घर कैसे चलेगा ? विकास के इस युग में ये बातें, कानून कैसे सामयिक हो सकते हैं?

उत्तर था- सामाजिक समरसता विकास का मूल है, सामाजिक ताना-बाना सुरक्षित तभी रहेगा जब पारस्परिक विश्वास रहेगा और यह तभी बढेगा जब एक दूसरे के मत-प्रथा को सम्मान व उपेक्षा-अपमान न होगा और इस दिशा में जाने वाला विकास चिरस्थायी और बहुआयामी होगा।

साधना, विवेक और लोकशिक्षण की वर्तमानकालिक राजनीति की महती आवश्यकता है, यह इसलिए भी क्योंकि, केवल साधन से विकास का मानक तय नहीं तो सकता, जब तक की समाज में सामाजिकता और राष्ट्र के प्रति आत्मीय भाव, जुड़ने का सम्बन्ध नहीं होगा। नहीं तो वही स्थिति हो जायेगी जब मौलिक अध्ययन से दूर रहने वाला कह देगा कि भारत का वास्तविक विकास तो अंग्रेजों ने किया, रेल विस्तार से लेकर तमाम... वे गिनवाने लगेंगे, तो हमें तब यह समझना होगा कि यह विकास का पक्ष है ही नहीं, क्योंकि उन्होंने केवल कच्चे माल को यूरोप तक पहुँचाने हेतु केवल यह रेल या राजमार्ग का निर्माण किया।

वर्तमान के परिप्रेक्ष्य को ले तो सड़क निर्माण के साथ यह भी हमें जानना होगा की उस अनुपात में वाहन तो बढ़े हैं पर एम्बुलेंस भी जन-जन के स्वास्थ्य और त्वरित चिकित्सा का हिस्सा भी बनी है कि नहीं ? तो यह विकास और विकास की राजनीति का आदर्श कहा जा सकेगा।

आम जन की जरूरत के हिसाब से या कि सत्ता के गलियारों में खींचा गया विकास का खाका? कौन सही? यह प्रश्न मूलभूत है, भारत की विभिन्नता उसे जोड़े हुए है इसका मूल उसकी तारतम्यता है, परन्तु जब कोई योजना बने और उसका धरातल पूरा देश बने यह तब सार्थक नहीं कहा जा सकता जबकि भौगोलिक, स्थानिक स्तर को जानने की कोशिश ही न हों।

पूर्वोत्तर की ओर पिछली सरकारों ने ध्यान नहीं दिया ऐसा नहीं है, परन्तु यह अधिक सत्य है कि जिस प्रकार ध्यानाकर्षण अब किया गया उसकी बहुत पहले से आवश्यकता थी।

देश में जब विकास की बात हो तो वह उसी तरह सोच के साथ हो, जिसमें शरीर

के सभी अंगों का समान विकास हो, केंद्र की सत्ता मानस रचयिता तुलसीदास जी के मुखिया मुख सो चाहिए ...... सा आचरण, बड़ापन दिखाए, पर यह आजादी से अब तक नहीं हुआ, यह विड़म्बना है और कटु सत्य भी। यह सामर्थ्यवान के विनम्र होने का गुण विकास की राजनीति के पाठ्यक्रम में समावेशित हो यह भी जरुरी है।

संस्कार का होना, राजनैतिक व्यक्तित्व की मूलभूत पहचान है, इसलिए प्राय: हम देखते हैं कि इस क्षेत्र में उतरे व्यक्ति का कोई भी समय-पल-क्षण व्यक्तिगत न होकर सार्वजनिक रहता है, हर एक कृत्य पर पैनी नज़र, और उस सबसे परे जब हम उसे देखते हैं तो सर्व-स्वीकार्यता नहीं बन पाती।

विकास की राजनीति का जीता-जागता उदाहरण वर्तमान में देखा जा सकता है, सुदूर महाद्वीपों के पार जब कोई अप्रवासी-प्रवासी भारतीय उत्साहित दिखाई देता है तो स्वत: देश का मनोबल, आत्म सम्मान बढ़ता है। सत्ता का होना, उसका प्रभुत्व होना वैश्विक राजनीतिक में प्रमुख रहता है, कोई भी देश या समाज आपका सम्मान क्यों करेगा जबकि आप अपने साँस्कृतिक मूल्यों का सम्मान नहीं करोगे, और जब आपका विश्वास मजबूत होता है, आपका स्वत्व-आंतरिक शुद्धता सुदृढ़ हो तो एक पल में दुनिया स्वीकारती है कि अंतरराष्ट्रीय योग दिवस होना, प्रतिवर्ष मनाया जाना चाहिए। भारत का विकास, विकास की भारतीय पद्धति ही हमारे ढाँचे के अनुकूल है इससे इतर न हमारा भला है न ही भविष्य भी।

एक उद्दरण है - एक वृक्ष था और एक लता थी, वह लता लिपटती गयी और अल्प काल में ही वह बढ़ते-बढ़ते उस वृक्ष से भी ऊपर जा उठी। एक दिन उसका प्रश्न था कि हे, वृक्ष तुम देखो उतने के उतने मैं कितना बढ़ गयी, बोलो उत्तर तो दो।

वृक्ष किञ्चित शान्त रहने के उपरान्त बोला- मैं चिर काल से विद्यमान हूँ, प्रतिवर्ष इसी भाँति कुछ लताएँ पनपती हैं, तेजी से बढती हैं और शरद काल के अंत को आते आते फिर स्मृति शेष रह जाती हैं, तुम्हारे प्रश्न की तरह ऐसे प्रश्न प्रत्येक साल मैं सुनता हूँ। परन्तु एक काल के बाद इस त्वरित और यकायक फैले तंत्र को नष्ट होता देखता हूँ। तुम जैसी न जाने कितनी ही अनगिनत गति-स्थिति-अधोगति को मैं देखता रहा हूँ, हर एक साल कोई तुम्हारी तरह मेरा आश्रय लेकर यही रटे हुए से सवाल मेरे समक्ष प्रस्तुत होते हैं।

सारत: - ऐसे अनेक तात्कालिक प्रयोग दुनिया भर में तथाकथित विज्ञ-जन देते रहे है, तो लताओं के समान त्वरित उत्थान दिखाते हैं, पर जिनकी उम्र या जिनमें स्थायित्व लेश मात्र भी नहीं है, अन्धानुकरण-शरण भारतीय विकास का मानक-प्रतिमान हो ही नहीं सकता । विकास का कोई भी आयातित प्रतिमान पंजाबी-मराठी-गुजराती-तमिल-तेलुगु-मलयालम -तुलु-बांग्ला-असमी-कोंकणी-मणिपुरी-बोदो-खासी-नेपाली-उर्दू-तिब्बती-कोकबोरोक और इन सबको मूल स्रोत संस्कृत से समृद्ध राष्ट्र में कैसे लागू किया जा सकता है, जब तक की उसमें उसकी स्थानीय माटी की सौंधी महक न हो।

विकास का भारतीय सिद्धान्त 'सनातन नित नूतन' की भांति सतत, चिरंतन है। भारत को रूस, चीन या की यूरोप बनाना नहीं इसे भारतीय ही बनाये रखना ही वस्तुत: विकास की राजनीति होगी। हमें न शंघाई चाहिए न लन्दन की चाह, हमें केवल दिल्ली दिलवालों की, आमची मुंबई या कि जलिकट्टू, पोंगल, बिहू, छट्ट और बैशाखी से अनुप्राणित विकास चाहिए, इतनी विविधता, नवरसों में नानी-दादी के लाड-प्यार में पला-पोसा मैं भारत ! इस आयातित विकास के साथ भला कैसे जी पाऊंगा? यह न केवल हम अपितु दुनिया का हर एक देश विकसित प्रतिमानों के समक्ष गुहार लगता है, पर **मुँह की बात सुनें हर कोई, दिल की बातें जाने कौन, आवाज़ों के बाज़ारों में ख़ामोशी पहचाने कौन?** पर! मेरा भारत, लाचार नहीं और अब, वर्तमान नेतृत्व में तो बिल्कुल नहीं 'न दैन्यं न पलायनं' यह मूलमन्त्र जिसका हो वह भला किसी का पिछलग्गू हो सकता है?

प्रयास जारी है, उसमें भाव शुचिता अद्यतन रहे तो अधिक सार्थक परिणाम आना ही है। राजनीति के अपने पक्ष हैं, अनेक हैं, कोई एक कभी पूर्ण और स्थायी नहीं हो सकता पर, उनमें विकास की राजनीति एक अधिक सार्थक-सटीक-सामयिक और समीचीन तंत्र हो सकता है, सबके अपने विचार हैं कहता भी हर एक यही है पर जब बात अनुसरण की आती है तो कोई बिरला ही पथगामी दिखाई देता है।

देश की वर्तमानकालिक व्यवस्था इस और अग्रसर हो, हो रही प्रतीत हो रही है, उसे इस ओर और अधिक गति दिखानी होगी इस रूप में भी क्योंकि विकास की भारतीय अवधारणा केवल राजमार्ग-हवाई अड्डा निर्माण याकि प्रक्षेपास्त्र तक सीमित नहीं है वह उन उपग्रहों की भी कल्पना और उड़ान को गति देता है जो किसान को फसल की जानकारी का एसएमएस देता है तो एक विद्यार्थी को शिक्षा से जोड़ता है ।

विज्ञान में साथ मानव का अंतर संबंध बनें, मनुष्य यंत्र नहीं है और प्यासे-भूखे की पूर्ति मोबाइल, लेपटॉप याकि बिना बाधित चलने वाला हाई स्पीड इन्टरनेट से नहीं हो सकता। नीति का मानवीय होना उतना आवश्यक है, सदानीरा नदियों का बहना, जंगलों का बचना, गिरि-कन्दरा-पर्वतों का संरक्षण, प्राकृतिक संसाधनों का केवल आवश्यकतानुरूप दोहन, आवश्यकता में संयम का पुट बना रहें ।

हर एक को काम-काम के अनुरूप आय-आमदनी भी, कोई देश केवल शरीर से स्वस्थ व्यक्तियों से नहीं बनता, दिव्यांगों की दुआ भी उसमें शामिल रहें और नहीं केवल मनुष्य से ही, विकास में जीवन-शैली, जीव-जंतु, प्रकृति-पर्यावरण का भी उतना ही महत्त्व है जितना अन्य का, विकास केवल जीडीपी की परिभाषा भर न रह जाये इस हेतु राजनैतिक इच्छा शक्ति की आवश्यकता है और वो भी तभी जब सब जुट जाएँ क्षुद्र राजनैतिक स्वार्थों को तिलान्जलि देते हुए ।

गाहे तव जय गाथा, जब गाये तो यह देश जन-गण-मन, मंगलदायक बनें यही कामना, यही विश्वास।❑

(संस्थापक-भारतीय युवा संसद
एवं मीडिया फाउंडेशन)

कर्नाटक राज्य महाविद्यालय शैक्षिक संघ द्वारा आयोजित प्रदेश कार्यकर्ता वर्ग का दीप प्रज्वलन से
शुभारम्भ तथा कार्यकर्ता वर्ग को संबोधित करते हुए पूज्य श्रीश्री रविशंकर गुरुजी

प्रदेश कार्यकर्ता वर्ग को सम्बोधित करते हुए राष्ट्रीय महामंत्री श्री शिवानन्द सिन्दनकेरा

तेलंगाना प्रान्त उपाध्याय संघ, सूर्यपेट इकाई द्वारा आयोजित
कर्तव्य बोध कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए श्री टी.साई. रेड्डी

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, गुजरात प्रदेश के प्रतिनिधि मण्डल की
मुख्यमंत्री श्री विजय रूपाणी जी से शुभेच्छा भेंट

राष्ट्रवादी शिक्षक परिषद, ओडिशा की ब्रह्मपुर इकाई
द्वारा आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम

भक्त फूल सिंह महिला विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ,
खानपुर कला, हरियाणा द्वारा कर्तव्य बोध कार्यक्रम

दिल्ली अध्यापक परिषद (राजकीय निकाय), पूर्वी जिला इकाई द्वारा आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम

ऑल जम्मू कश्मीर एण्ड लद्दाख टीचर्स फेडरेशन की उधमपुर इकाई द्वारा आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम को संबोधित करते हुए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रान्त कार्यवाह श्री पुरुषोत्तम दाधीच

हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ, हमीरपुर इकाई द्वारा आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम को संबोधित करते हुए प्रदेश महामंत्री श्री जगवीर चन्देल

दीनबन्धु चौधरी छोटूराम विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ, मुरथल (सोनीपत) द्वारा आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम को संबोधित करते हुए कुलपति डॉ. राजेन्द्र अनायत। मंचासीन प्रो. दया सिंह, क्षेत्र कार्यवाह प्रो. सीताराम व्यास

कोलकाता में बंगीय नव उन्मेष प्राथमिक शिक्षक संघ द्वारा आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम
तथा प्रदेश कार्यकारिणी को संबोधित करते हुए अ.भा. संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर

कोलकाता में 'राष्ट्रीय सुरक्षा' विषय पर आयोजित संगोष्ठी को संबोधित करते हुए अ.भा. संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर

बंगीय शिक्षा ओ शिक्षाकर्मी संघ की कोलकाता में प्रदेश बैठक को संबोधित करते अ.भा. संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर

कर्नाटक राज्य माध्यमिक शिक्षक संघ, धारवाड़ इकाई द्वारा आयोजित कर्तव्य बोध
कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए प्रदेश के अतिरिक्त महामंत्री श्री संदीप बूधियाल

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, गुजरात की गाँधी नगर जिला इकाई द्वारा आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम

रुक्टा (राष्ट्रीय) की महारानी श्री जया महाविद्यालय, भरतपुर इकाई में कर्तव्य बोध कार्यक्रम सम्पन्न

राजकीय महाविद्यालय, डूंगरपुर में कर्तव्य बोध कार्यक्रम को संबोधित करते हुए रुक्टा राष्ट्रीय के प्रदेश संगठन मंत्री डॉ. ग्यारसीलाल

रुक्टा (राष्ट्रीय) की राजकीय महाविद्यालय केकड़ी इकाई में आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, पाटन जिला इकाई द्वारा आयोजित कर्तव्य बोध कार्यक्रम को संबोधित करते हुए राष्ट्रीय सचिव श्री मोहन पुरोहित

रुक्टा (राष्ट्रीय) की श्रीडूंगर महाविद्यालय, बीकानेर इकाई के कर्तव्य बोध कार्यक्रम को संबोधित करते हुए पूज्य सुबोधगिरी महाराज

नियमित जीवन-पद्धति : साफल्य का मूल-मंत्र

❑ डॉ. शिप्रा पारीक

ऊषा काल से दिन का प्रारम्भ होता है और वहीं से होती है दिनचर्या शुरू। भारतीय संस्कृति में ''ब्रह्म मुहूर्त में जागरण का विधान है यही जागरण स्वस्थ-जीवन की संजीवनी है।''

आचार्य यशोवर्मन ने 'उठो सवेरा हो गया' में लिखा है - ''यह ऊषा काल है, इसी को ऋषि-मुनियों ने अमृत बेला का नाम दिया है तुम्हारी आयु को अमर बनाने वाला अमृत-सुहावनी समीर के रूप में इसी समय लुटा करता है। तुम इस ऊषा-काल के अमृत को लूटकर क्यों पान नहीं करना चाहते, क्या तुममें अपने शरीर को स्वस्थ, सबल, दीर्घ जीवी और कान्तिमय बनाने की इच्छा नहीं है? अगर हाँ, तो फिर इस सुहावने स्वास्थ्यप्रद ऊषा-काल में उठने-नियमित रूप से उठ पड़ने की आदत क्यों नहीं डालते ? आलसी और प्रमादी के समान तुम क्यों अभी तक शयनागार में पड़े-पड़े अंगड़ाइयाँ ले रहे हो ? क्या तुम्हें नहीं मालूम कि देर से उठने की तुम्हारी आदत तुम्हें धीरे-धीरे रोग-शय्या की ओर ले रही है ?''

ऋग्वेद में ब्रह्म मुहूर्त में जागरण के विषय में लिखा है -

प्रातारत्नं प्रातरित्वा दधातितं
चिकित्वान्प्रतिगृह्यानिधत्ते।
तेन प्रजां वर्धयमान आयु
रायस्पोषेण सचते सुवीरः।।

ऋग्वेद (1-125-1)

अर्थात् प्रातःकाल सूर्योदय से पहले उठने वाले को उत्तम स्वास्थ्य रत्न की प्राप्ति होती है। इसलिये बुद्धिमान व्यक्ति उसका उपयोग करते हैं। ब्रह्म मुहूर्त में उठने वाला व्यक्ति स्वस्थ, सुखी, पुष्ट, दीर्घायु और वीर होता है।

यह मनुष्य शरीर बड़ा दुर्लभ है, बार-बार नहीं मिलता। चाणक्य ने लिखा है-

पुनर्वित्तं पुनर्मित्रं पुनर्भाया पुनर्मही।
एतत्सर्वं पुनर्लभ्यं न शरीरं पुनः पुनः।।

- चाणक्य नीति (13-3)

अर्थात् धन, मित्र, पत्नी और भू-सम्पदा नष्ट होने या बिछुड़ जाने पर पुनः मिल जाते हैं, किन्तु यह मनुष्य शरीर बार-बार नहीं मिलता। तुलसीदास जी ने भी यही बात कही है -

बड़े भाग मानुस तनु पावा।

यह अमोल मानुस तन कौड़ियों के मोल व्यर्थ न चला जाये। इसके लिये इसे स्वस्थ रखना नितान्त आवश्यक है। यह 'मानुस' तन स्वस्थ 'नियमित जीवन पद्धति' के अनुसरण से ही रह सकता है। मनीषियों के अनुसार '**ब्रह्मे मुहुर्ते उत्तिष्ठेत् स्वस्थो रक्षार्थ मानुष**' अर्थात् दीर्घ जीवन एवं स्वास्थ्य के लिये मनुष्य को ब्रह्म मुहूर्त में उठना चाहिये। एक अंग्रेजी कवि का कथन है - 'Early to bed and early to rise, makes a man healthy, wealthy and wise' भी ब्रह्म मुहूर्त में जगने के महत्त्व को प्रतिपादित करता है।

मनुष्य की तामसी सभ्यता के प्रभाव से जो क्षेत्र मुक्त है वहाँ पर ब्रह्ममुहूर्त में उठना एक स्वाभाविक क्रिया के समान दिखाई देता है। पशु-पक्षी सदैव ब्रह्म मुहूर्त में अपनी निद्रा का त्याग कर देते हैं। छोटे अबोध बच्चे भी ब्रह्म मुहूर्त में जग जाते हैं। आयुर्वेद में ऊषा पान की महिमा मुक्त कंठ से गाई गई है।

विगत धन निशीथे प्रातरुत्थाय नित्यं,
पिबति खलु नरो या घ्राण रुध्रेण वारि।
स भवति मतिपूर्णश्चक्षुषा तार्क्ष्यतुल्योः
बलि पलित-विहीनः सर्वरोगेर्विमुक्तः।।

अर्थात् जो मनुष्य प्रातः काल धना अंधेरा दूर होने पर नासिका द्वारा जलपान करता है वह पूर्ण बुद्धिमान एवं नेत्र ज्योति में गरुड़ के समान हो जाता है। उसके बाल भी कभी सफेद नहीं होते तथा वह रोगों से हमेशा मुक्त रहता है।

ब्रह्ममुहूर्त में जागरण के पश्चात् भ्रमण नियमित जीवन शैली में मनुष्य के लिये परमावश्यक है। आयुर्वेद में भ्रमण के लिये कहा गया है -

यत्तु चक्रमणं नाति देश-पीड़ाकरं भवेत।
तदार्युबल-मेधाग्नि-प्रदमिन्द्रिय-बोधनम्।।

यह ऊषा काल है, इसी को ऋषि-मुनियों ने अमृत बेला का नाम दिया है तुम्हारी आयु को अमर बनाने वाला अमृत-सुहावनी समीर के रूप में इसी समय लुटा करता है। तुम इस ऊषा-काल के अमृत को लूटकर क्यों पान नहीं करना चाहते, क्या तुममें अपने शरीर को स्वस्थ, सबल, दीर्घ जीवी और कान्तिमय बनाने की इच्छा नहीं है? अगर हाँ, तो फिर इस सुहावने स्वास्थ्यप्रद ऊषा-काल में उठने-नियमित रूप से उठ पड़ने की आदत क्यों नहीं डालते ? आलसी और प्रमादी के समान तुम क्यों अभी तक शयनागार में पड़े-पड़े अंगड़ाइयाँ ले रहे हो ? क्या तुम्हें नहीं मालूम कि देर से उठने की तुम्हारी आदत तुम्हें धीरे-धीरे रोग-शय्या की ओर ले रही है ?

अर्थात् सामर्थ्यानुसार भ्रमण आयु, बल व बुद्धि प्रदायक होता है, इससे इन्द्रियों की शक्ति जाग्रत होती है।

भ्रमण के पश्चात् तेल–मालिश एवं व्यायाम का अभ्यास करना चाहिये। तेल–मालिश से शरीर में जीवनी शक्ति का संचार होता है।

जल-सिक्तस्य वर्धन्त यथा मूलेङ्कुरास्तरोः।
तथा धातुविविद्धिर्हि स्नेह सिक्तस्य जायते।।

'जिस प्रकार जल सींचने से वृक्ष की जड़ें, पत्ते, टहनियाँ तथा अंकुर फैलते व बढ़ते हैं, उसी प्रकार तेल से सींचे हुये शरीर में रस रक्तादि सभी धातुओं की वृद्धि हो जाती है।'

शरीर को स्वस्थ रखने में नित्य स्नान भी सर्व सुलभ साधन है। नित्य शीतल जल से स्नान करने से स्नायुमंडल सशक्त होता है और मानसिक प्रसन्नता की प्राप्ति होती है। अथर्ववेद में कहा गया है –

'अपस्वन्तरममृतमप्सु भेषजम्'

अर्थात् जल में औषधि तथा अमृत विद्यमान है। महर्षि चरक ने स्नान के महत्त्व को बताते हुये लिखा है –

पवित्रं वृषण यमायुष्मं श्रम स्वेदमलापहम।
शरीर बल सन्धानं स्नानमोजस्करं परम्।।

अर्थात् स्नान पवित्रता कारक, वीर्य वर्धक, दीर्घ आयु प्रदाता, थकावट व पसीना नाशक, मल को दूर करने वाला, बल को बढ़ाने वाला और ओज व तेज को प्रदान करने वाला है।

नियमित जीवनचर्या में स्नान के पश्चात् अपनी उपासना–पद्धति के अनुसार ईश्वर के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करनी चाहिये। ईश आराधना सुख, शान्ति व सन्तोष प्राप्ति का मार्ग है।

रात्रि शयन से दो–तीन घण्टे पूर्व रात का भोजन स्वास्थ्य के लिये उपयोगी रहता है। देर रात तक जागने से स्वास्थ्य पर अनिष्ट कर प्रभाव पड़ता है।

ब्रह्म मुहूर्त में उठना, दिन–भर सकारात्मक ऊर्जा से पर–हित कार्य करना और रात्रि में श्रेष्ठ कृत कार्यों का चिन्तन कर अगली ऊर्जा पूर्ण किरण में जागरण के लिये कृत संकल्प होना, यही दिनचर्या की उत्तम सीपी है जिसमें उत्तम स्वास्थ्य का मोती बन्द है।

प्राक् महर्षियों ने शास्त्रों में 'सुखी' रहने के सभी मंत्र ग्रंथित किये थे। आवश्यकता मात्र मंथन की है।

वर्तमान परिदृश्य में मनुष्य भौतिक अन्धानुकरण की दौड़ में इस कदर दौड़ रहा है कि वह 'स्वसुख' को खोता जा रहा है। आज की जीवन–शैली परिवर्तित हो गयी है। जहाँ ब्रह्म मुहूर्त में उठने की बात स्वस्थ जीवन–पद्धति का मूलाधार है तो हम देखते हैं कि हमें अपने गली, मौहल्लों में भी ऐसे द्वार कम ही मिलेंगे जो ब्रह्म मुहूर्त में खुले हो। देर रात्रि तक जागरण स्वास्थ्य के लिये हानिकारक बताया है, वहीं बहुसंख्या में आज मनुष्य अर्द्धरात्रि तक अवश्य जागरण करता है। इस बिगड़ी जीवन–पद्धति के परिणाम हमारे समक्ष हैं।

कम उम्र में ही लोगों को अनेक रोग उत्पन्न हो रहे हैं। समुचित जीवन–पद्धति न होने से मानसिक विकार भी बढ़ने लगे हैं। प्रकृति ने जो मनुष्य के लिये रचा है उसी अनुरूप रहने से मनुष्य की सार्थकता है, वही सुन्दरता है और वही समृद्धिकारिता है।

अतः नियमित जीवन–पद्धति को मनुष्य को अपनाना चाहिये और चहुँओर इसको ग्रहण करने के लिये प्रेरित करते रहना चाहिये। मनुष्य अपने भाग्य का स्वयं विधाता है। परमात्मा ने यह स्वर्णिम जीवन दिया है, इसे अच्छे से जियो –

गीतकार नीरज ने कहा है –

एक दिन भी जी, मगर,
तू आज बनकर जी।
अटल विश्वास बनकर जी
अमर गुनगान बनकर जी।
मत विहग बन ओ मनुज !
आकाश बनकर जी।
मत पुजारी बन,
स्वयं भगवान बनकर जी। ❑

(व्याख्याता - संस्कृत, एस.एस. जैन सुबोध पी.जी. ऑटोनोमस कॉलेज, जयपुर)

सुख, साधना और सोम

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

सोम का वेदों में गुणगान किया गया है। ऋग्वेद में कहा गया है कि सोम स्वादिष्ट है, मधुर है, रसीला है। सोमपान करने वाला बलशाली व अपराजेय बन जाता है। ऋग्वेद में सोम मंडल नाम से पूरा अध्याय है। सोम को कूट-पीसकर तथा भेड़ की ऊन के बने छनने से छाना जाता था। सोम का स्वाद तीखा होने के कारण इसमें गाय का दूध, दही, शहद अथवा घी मिलाया जाता था। सोमरस के लिए इंद्र, अग्नि आदि वैदिक देवता लालायित रहते हैं। सोम अनुष्ठान के अन्त में पहले देवताओं को सोमरस अर्पित किया जाता था। बाद में सभी प्रसाद रूप में ग्रहण करते थे। स्वामी दयानन्द के अनुसार सोम एक नशा रहित पोषक पदार्थ था।

सुख पाने का प्रयास जीवमात्र का गुण है। एक कोशीय अमीबा भी कष्ट की स्थिति से तुरन्त उभरने का प्रयास करता है। मानव तो जीवों में सर्वाधिक संवेदनशील प्राणी है। सुख पाने के प्रयासों ने ही मानव को शिक्षित होना सिखाया। शिक्षित मानव ने सुख पाने के लिए विभिन्न आविष्कार किए हैं। प्रारम्भिक काल में मानव प्राकृतिक शक्तियों की मार से झूझता रहा। प्राकृतिक शक्तियों को देवता मानकर आराधना करने लगा। ऐसे समय में मानव ने एक ऐसे पेय पदार्थ का आविष्कार किया जिसे पीकर वह अपने को सुखी और शक्ति सम्पन्न अनुभव करने लगा था। उस पेय का नाम था सोम। कुछ विद्वानों का मानना है कि रामायण में वर्णित 'संजीवनी बूँटी' भी सोम है।

शराब नहीं सोम

वर्तमान में कुछ लोग सोम का अर्थ शराब से लगा कर इसके सेवन को उचित ठहराने का प्रयास करते हैं। सोम को बनाने व इसके सेवन करने का जो वर्णन वेदों में मिलता उसका शराब से साम्य नहीं है। ऋग्वेद में शराब की घोर निंदा करते हुए कहा गया, **हृत्सु पीतासो युध्यन्ते दुर्मदासो न सुरायाम्।** सुरापान करने या नशीले पदार्थों को पीने वाले अक्सर युद्ध, मार-पिटाई या उत्पात मचाया करते हैं।

सोम का वेदों में गुणगान किया गया है। ऋग्वेद में कहा गया है कि सोम स्वादिष्ट है, मधुर है, रसीला है। सोमपान करने वाला बलशाली व अपराजेय बन जाता है। ऋग्वेद में सोम मंडल नाम से पूरा अध्याय है। सोम को कूट-पीसकर तथा भेड़ की ऊन के बने छनने से छाना जाता था। सोम का स्वाद तीखा होने के कारण इसमें गाय का दूध, दही, शहद अथवा घी मिलाया जाता था। सोमरस के लिए इंद्र, अग्नि आदि वैदिक देवता लालायित रहते हैं। सोम अनुष्ठान के अन्त में पहले देवताओं को सोमरस अर्पित किया जाता

था। बाद में सभी प्रसाद रूप में ग्रहण करते थे। स्वामी दयानन्द के अनुसार सोम एक नशा रहित पोषक पदार्थ था।

सोम या होम

सोम के अनुष्ठान भारत के बाहर भी होते थे। ईरानी या पारसी संस्कृति प्रमुख है। पारसियों की भाषा में 'स' ध्वनि का अभाव होने के सोम को 'होम' कहा गया है। हिन्दू व पारसी परिवारों में सोम या होम से मिलते अनुष्ठान आज भी किए जाते हैं। वैदिककाल में माना जाता था कि कुपात्र को दी गई विद्या समाज के लिए अहितकर हो सकती है। यही कारण रहा होगा कि समुद्र मंथन से प्राप्त अमृत दानवों को नहीं दिया गया। छांदोग्य उपनिषद में सोम को राजा और देवताओं का भोज्य कहा गया है। वेदों में सोम अनुष्ठान का वर्णन रहस्यमय है। यह स्पष्ट नहीं होता कि वास्तव सोम क्या है? कालान्तर में सोम की पहचान लुप्त हो गई तथा विभिन्न पादपों को सोम बताया जाने लगा।

सोम नामक पुस्तक में डेविड स्पेस ने सोम का विशद् विश्लेषण किया है। स्पेस ने लिखा है कि सोम भारत में अत्यधिक लोकप्रिय था। विश्व की सभी संस्कृतियों ने सोम कर्मकाण्डों को अपनाया था। स्पेस के अनुसार हिन्दुओं के पवित्र पुष्प कमल (Nelumbo nucifera) व इसी कुल के अन्य पादपों से सोम बनाया जाता था। सोम कई प्रकार का होता था तथा आवश्यकतानुसार काम में लिया जाता था। स्पेस का मानना है कि सोम का उपयोग करने वाला समाज औषधि, मनोविज्ञान, जादू-टोना, चिरयौवन, दीर्घायु-रहस्य कीमियागिरी आदि विषयों में बहुत ज्ञानी था। सूक्ष्म-

जीवविज्ञान, कवक-विज्ञान व संस्कृत के ज्ञाता डेविड स्पेस ने भारत में व्यापक भ्रमण कर सोम की जानकारी जुटाई थी।

भारत के दक्षिणी भागों में सोमलता (Sarcostemma acidum) के रस का औषधि के रूप में उपयोग करने की प्रथा प्राचीनकाल से ही चली आ रही है। चांदनी रात में एकत्रित किए जाने के कारण इसे सोम नाम दिया गया। माना जाता है कि सोमलता के दूध में किण्वन से सोम तैयार किया जाता था। हरमेल या आस्पंद (Peganum harmala) को भी सोम बताया जाता है। हरमेल के बीज का उपयोग लोक-औषधि व धार्मिक अनुष्ठानों में किया जाता है।

कुछ लोग शहद को ही सोम बताते हैं। पश्चमी विद्वानों ने अवेस्ता में वर्णित पारसी-अनुष्ठानों के आधार पर सोम को खोजने का प्रयास किया है। ऐसे ही एक प्रयास में इफेड्रा को होम (सोम) बताया है। अंग्रेजी काल में भांग (cannabis) को सोम बताया गया। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में इस बात पर जोर दिया गया कि मनोसक्रियक पदार्थ युक्त वनस्पति ही सोम हो सकती है। अमेरिकन मानव-कवक-विज्ञानी गोर्डन वास्सन ने खुम्बी अमानटिया मस्केरिया (Amanita muscaria) को सोम बताया। वास्सन व उसके साथियों ने यह खोज निकाला कि वैदिक सोम अनुष्ठान जैसा, आत्माओं से सम्पर्क साधने का अनुष्ठान, साइबेरिया में खुम्बी अमानटिया मस्केरिया के प्रयोग से किया जाता है। हैरी फॉक ने कहा कि सोम या होम के वर्णन में चेतनाकारी प्रभाव का ही वर्णन है, शरीर में देवीय शक्तियों के प्रवेश का विभ्रम उत्पन्न करने की बात नहीं है। फॉक ने इफेड्रा की प्रजातियों को सोम बताया। बीसवीं सदी के अन्त तक इफेड्रा को ही सोम माना जाता रहा। शरीर में ऊर्जा भरने के गुण के कारण इफेड्रा का उपयोग विविध औषधियों में होता रहा है।

मानव वनस्पति विज्ञानी टेरेन्स मेककेन्ना ने अपनी पुस्तक फूड्स ऑफ दी गोड्स में कहा कि खुम्भी साइलोसाइबे क्यूबेन्सिस, सोम के सबसे नजदीक है। साइलोसाइबे क्यूबेन्सिस विभ्रमकारी है तथा विशिष्ट वातावरण में गाय के गोबर पर उगती है। ऋग्वेद में सोम के प्रसंग में गाय का उल्लेख कई बार आया है। कई वैज्ञनिकों ने पाया कि अमानटिया मस्केरिया के प्रयोग से वह स्थिति पैदा नहीं होती जैसी सोम के प्रयोग से होने की बात वेदों में की गई है।

नवीनतम अनुसंधान

सोम के विषय में नवीनतम तथा सर्वाधिक विश्वसनीय अनुसंधान खुम्भी साइलोसाइबे क्यूबेन्सिस के पक्ष को मजबूत करता है। रूसी, मंगोलियाई खोजी दल ने मंगोलिया के जंगलों की एक गहरी कब्र से लाल रंग की ऊनी कालीन का टुकड़ा मिलने का दावा किया है। कालीन पर बेल-बूटेदार कसीदे से प्राचीन पारसी अनुष्ठान को चित्रित किया गया है। अनुसंधानकर्ताओं का अनुमान है कि इसे दो हजार वर्ष पूर्व सीरिया या फ़िलिस्तीन में बुना गया था, बेल-बूटे पश्चिमोत्तर भारत में काढ़े गए थे। बाद में यह कालीन मंगोलिया पहुँचा।

कपड़े पर कढ़े चित्र के बीच में एक वेदी है। वेदी की बाँई तरफ लम्बा चोगा पहने हाथ में छत्रक लिए एक प्रभावशाली व्यक्ति खड़ा है। व्यक्ति का पूरा ध्यान छत्रक पर केन्द्रित है। छत्रक दिखने में वनस्पति साइलोसाइब क्यूबेन्सिस जैसा है। कपड़े पर बहुत अधिक मधुमक्खियाँ और तितलियाँ चित्रित है। प्रमुख अनुसंधानकर्ता नतालिया पलोस्माक के अनुसार यह सोम अनुष्ठान का दृश्य है। प्रभावशाली व्यक्ति राजा या पुरोहित है। सम्भावना है कि यह अनुष्ठान तत्कालीन पश्चिमोत्तर भारत में किया जा रहा था। उन दिनों यह क्षेत्र भारतीय, ईरानी और यूनानी, संस्कृतियों का मिलन-स्थल था। मेक्सिको में साइलोसाइबिन युक्त छत्रकों को परिरक्षित करने हेतु मधु उपयोग के प्रमाण मिले हैं।

यूनानी पुराणों में तितली को आत्मा की देवी 'साइकी' माना जाता है। यूनानी शब्द 'साइकी' आत्मा और तितली, दोनों के अर्थ में प्रयुक्त होता है। भारतविज्ञानी व ऋग्वेद अनुवादक ततियाना येलिज़ारिन्कवा ने इस मंगोलियाई अन्वेषण से ठीक दस वर्ष पहले लिखा था कि ऋग्वेद की ऋचाओं की मानें तो सोम सिर्फ उद्दीपक ही नहीं, बल्कि विभ्रमजनक पेय था। ऋग्वेद की ऋचाओं में सोम-अनुष्ठान का वर्णन तत्कालीन भाषा-शैली में काव्य रूप के कारण सोम की सही पहचान अभी तक नहीं हो पाई है। अच्छे अनुसंधान साधनों की उपलब्धता के कारण सोम रहस्य के और सुलझने की संभावना है। ❑

(बाल साहित्य एवं विज्ञान विषयक लेखक)

शिक्षा नीति लाएँ तो सारे प्रश्नों के उत्तर भी मिलें

❑ जगमोहन सिंह राजपूत

वर्ष 2017 में शिक्षा नीति आने की सबसे बड़ी संभावना बनी थी। इसके पहले राष्ट्रीय स्तर पर 1968, 1986 तथा 1992 में शिक्षा नीति का निर्माण हुआ था। टीएसआर सुब्रह्मण्यम की अध्यक्षता में नीति निर्माण का प्रारूप तैयार करने वाली समिति ने मई 2016 में अपना मसौदा केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री को सौंपा। उसे सामान्यजन तक पहुँचाने के लिए मंत्रालय की आधिकारिक वेबसाइट पर डाला गया। विरोध करने वाले सक्रिय हो गए, नए सुझाव देने वाले भी आगे आए। नए मंत्री आए और सरकार ने एक और समिति बनाने का निर्णय लिया। अब वैज्ञानिक डॉक्टर कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में समिति बनी। यह समिति भी लगभग इसी तरह आगे बढ़ रही है। कहा गया कि नई शिक्षा नीति का प्रारूप निकट भविष्य में तय हो जाएगा।

नई शिक्षा नीति से अनगिनत अपेक्षाएँ हैं। नई नीति में सरकारी स्कूलों की घटती साख, अध्यापकों की देश में हर स्तर पर कमी, निजीकरण और व्यापारीकरण, शोध, इनोवेशन और गुणवत्ता से जुड़े प्रश्नों के उत्तर हम खोजना चाहेंगे। गुणवत्ता तभी पूर्ण मानी जाएगी जब वह कौशल विकास और व्यक्तित्व विकास के पक्षों को उतना ही या उससे भी अधिक महत्त्व दे जितना आज मात्र अंक नियंत्रित ज्ञान प्राप्त करने की व्यवस्था में दिया जा रहा है। देश में अनेक राज्यों में परीक्षा में नकल तथा प्रायोगिक परीक्षाओं में घोर धांधली के कारण लाखों बच्चों का भविष्य बर्बाद होता है। इस दिशा में अब नई टेक्नोलॉजी के आने के बाद सुधार की बहुत संभावनाएं उभरी हैं। सुधार का पता 2018 में होने जा रही परीक्षाओं में लगेगा।

शिथिलता भी शिक्षा व्यवस्था का बड़ा दोष है। अनेक केंद्रीय विश्वविद्यालयों के कुलपतियों की नियुक्तियों में देरी हुई। मूल्यों की शिक्षा के अभाव तथा सामान्य जीवन में उनके क्षरण के परिणाम अब शीर्ष स्तर तक दिखाई देने लगे हैं। विश्व-रैंकिंग में भारतीय संस्थान के पिछड़ने पर चिंता व्यक्त की जाती रही है। पहली बार मंत्रालय ने अपनी रैंकिंग व्यवस्था को संरचना तथा स्वरूप दिया है। नैक (नेशनल असेसमेंट एंड अक्रेडिटेशन काउंसिल) की कार्य प्रणाली में बड़े स्तर पर परिवर्तन कर उसे अधिक प्रभावशाली बनाया गया है। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (एनसीटीई) ने, जो अपनी साख के निम्नतम स्तर पर जा चुकी थी, इस वर्ष साहस और सजगता का परिचय दिया। लगभग एक हजार फर्जी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं के बंद होने की स्थिति हो गई है। अब अध्यापक प्रशिक्षण के केवल दो वर्षीय तथा चार वर्षीय प्रशिक्षण कार्यक्रम ही स्वीकार्य होंगे। राष्ट्रीय मुक्त शिक्षा संस्थान (एनआइओएस) ने 15 लाख अध्यापकों को 'ऑनलाइन' प्रशिक्षण देने का कार्य

नई शिक्षा नीति से अनगिनत अपेक्षाएँ हैं। नई नीति में सरकारी स्कूलों की घटती साख, अध्यापकों की देश में हर स्तर पर कमी, निजीकरण और व्यापारीकरण, शोध, इनोवेशन और गुणवत्ता से जुड़े प्रश्नों के उत्तर हम खोजना चाहेंगे। गुणवत्ता तभी पूर्ण मानी जाएगी जब वह कौशल विकास और व्यक्तित्व विकास के पक्षों को उतना ही या उससे भी अधिक महत्त्व दे जितना आज मात्र अंक नियंत्रित ज्ञान प्राप्त करने की व्यवस्था में दिया जा रहा है। देश में अनेक राज्यों में परीक्षा में नकल तथा प्रायोगिक परीक्षाओं में घोर धाँधली के कारण लाखों बच्चों का भविष्य बर्बाद होता है। इस दिशा में अब नई टेक्नोलॉजी के आने के बाद सुधार की बहुत संभावनाएं उभरी हैं। सुधार का पता 2018 में होने जा रही परीक्षाओं में लगेगा।

प्रारम्भ किया है, जिस पर सबकी निगाहें रहेंगी।

सीबीएसई को अपने उत्तरदायित्वों के निर्वाह के लिए अब अधिक समय मिल सकेगा, क्योंकि सरकार ने पात्रता परीक्षाओं के अनावश्यक बोझ से उसे मुक्त करने का सही निर्णय लिया है और ऐसी परीक्षाओं के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक नई संस्था के निर्माण को स्वीकृति दी है। लेकिन, अतिथि अध्यापक तथा शिक्षाकर्मी जैसे प्रावधान समाप्त नहीं हो पाए हैं। शिक्षा संस्थानों में यदि उचित अनुपात में अध्यापक ही नहीं होंगे तो गुणवत्ता सुधार की चर्चा बेमानी होगी। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) दो कारणों से सारे वर्ष चर्चा में रहा। एक, उसका अपना भविष्य क्या है? दूसरा, वहाँ अनेक माह तक अध्यक्ष और एक साल से अधिक समय से उपाध्यक्ष रिक्त रहे। बीस अंतरराष्ट्रीय स्तर के विश्वविद्यालय बनाने के केंद्र सरकार के निर्णय को लेकर भारी उत्सुकता है। ये जल्दी साकार होने चाहिए। संस्थाओं के अध्यक्षों/निदेशकों/कुलपतियों की नियुक्ति पद खाली होने के एक महीने पहले घोषित हो जानी चाहिए। 7वें वेतन आयोग के बाद उच्च शिक्षा संस्थानों में नए वेतनमान घोषित हो चुके हैं। स्कूल शिक्षा का स्तर वृहद रूप से तभी सुधर सकता है, जब राज्य सरकारें ईमानदारी से अध्यापकों की नियमित नियुक्ति पारदर्शी तरीके से करने की कटिबद्धता दिखाएँ। इस दिशा में इस वर्ष भी कोई बहुत आशाजनक स्थिति निर्मित नहीं हुई। इस वर्ष शिक्षा के क्षेत्र में निराशा घटी नहीं हैं लेकिन, अपेक्षाएँ भी धुँधली नहीं पड़ी हैं। सबसे बड़ी चुनौती शिक्षा संस्थाओं में उस वातावरण को तैयार करने की है, जहाँ अध्यापक और विद्यार्थी ज्ञान के सर्जन और समझ का साथ-साथ मिलकर आदान-प्रादान करते हैं और सर्वजनहित में उसके उपयोग की संभावनाओं का आकलन कर इनोवेशन करते हैं। टेक्नोलॉजी युग में अर्थव्यवस्था ज्ञान आधारित होती जा रही है। हमारे शिक्षा संस्थान ऐसे हों कि वे ज्ञान का अध्ययन मात्र करें बल्कि ज्ञान के निर्माण के इंजन भी साबित हों। इस दृष्टि से देखें तो 2018 में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में बहुत कुछ करने की जरूरत है। ❑

(शिक्षाविद्, पूर्व डायरेक्टर, एनसीईआरटी)

Kartavya Bodh Karyakram at Udhampur (J&K)

All Jammu Kashmir and Ladakh Teachers Federation under the banner of Akhil Bhartiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh, Udhampur unit celebrated Kartavya Bodh Divas in which the teachers, eminent educationists and citizens participated .

In this programme Sh Purshotam Dadhich, Prant Karyavah, Rashtriya Swayamsevak Sangh Jammu and Kashmir was the chief spokesperson and Sh. J.R. Bhardwaj, Chief Education Officer Udhampur was the Chief Guest during the occassion .

Shaikshik Mahasangh celebrates Kartavya Bodh Divas programme in January between the Birth anniversary of Swami Vivekananda and Netaji Subash Chander Bose in all over the country every year.

The programme was started by lighting of the traditional lamp and flowering on the pictures of Saraswati mata, Bharat mata, Swami Vivekananda and Netaji Subash Chandra Bose by the Chief guests. Rakesh Sharma sang Saraswati vandana and Presented detailed objectives and background of Shaikshik Mahasangh.

Sh Purshotam Dadhich, Prant Karyavah Rashtriya Swayamsevak Sangh Jammu and Kashmir during his address as a chief Spokesperson said that:

The main purpose to celebrate Kartavya Bodh Divas karyakaram is not only to aware the teachers but also to aware the whole society about our duties and responsibilities towards the, students, education, society and nation .

He said that the level and standard of education degraded during the British rule and even after Independence, it also degraded a lot and no sincere steps were taken by the Governments . The Politicians and bureaucrats considered teachers as a machine and deputed teachers in various others non teaching jobs. Teachers are not involved in framing of the syllabus, textbooks . No transparent and fair transfer policy in the deptt.available , all these things led to demoralised the teaching fraternity .

J. R. Bhardwaj, Chief Education Officer Udhampur as a Chief Guest said that we are the respectable and responsible persons of society, we should work with full dedication, honesty, sincerity, zeal and enthuasism . This is the main motive behind the celebration of Kartavya Bodh Divas programme. He said that the Shaikshik Mahasangh is the only organisation in the country which is conducting different types of programmes for awareness, motivation and inspiration of the teachers and society. He talked about different types of Gurus, Spiritual Guru, Intellectual Guru etc.

Ravi Kumar, Distt Vice President sang a beautiful song of the Shaikshik Mahasangh and also the stage Secretary. Devraj Thakur, State President of Shaikshik Mahasangh welcomed all the guests and participants . He said that Shaikshik Mahasangh is working for the betterment of teaching fraternity and resolved many issues of teachers. Rattan Chand Sharma State General Secretary, Shaikshik Mahasangh said that our organisation is going to become.the biggest organisation in J&K within two years.

बदला जमाना बदले खेल

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि तकनीक आधारित खेलों ने बाल मानसिकता पर गहरा प्रभाव छोड़ा है। पहले यूरोपीय देशों में हिंसक घटनाओं के रूप में इसके दुष्प्रभाव देखने को मिलते थे, लेकिन अब भारत में भी इसके गंभीर नतीजे देखने को मिल रहे हैं। टेलीविजन पर दिखाए जाने वाले हिंसक कार्टून चरित्रों और खेलों ने बाल मानसिकता को प्रभावित किया है। हिंसक खेल बच्चों को शीघ्र बदला लेने की ओर अग्रसर कर रहे हैं। इस मुद्दे पर विश्व स्वास्थ्य संगठन की ओर से जारी आँकड़े चिंता को बढ़ाते हैं। इनके मुताबिक अत्यधिक मार-धाड़ वाले टीवी चैनल, वीडियो गेम को खेलने वाले ज्यादातर बच्चों का ब्लड प्रेशर सामान्य बच्चों के मुकाबले अधिक पाया गया।

❑ **नाज़ खान**

विकास जीवन का अनिवार्य चक्र है। यही वजह है कि हर पीढ़ी अपनी पिछली पीढ़ी से कुछ अलग करती, करने का प्रयास करती, कुछ नया तलाशती–रचती–बरतती है। इसी वजह से खेल भी बदलते रहे हैं। खेलों के रंग–ढंग बदलते रहे हैं। गिल्ली–डंडा, कँचा–गोली, छुपम–छुपाई जैसे खेल एक समय बच्चों के प्रिय खेल हुआ करते थे। उनसे बच्चों का शारीरिक–मानसिक स्वास्थ्य दुरुस्त रहता था। मगर बदले जमाने में सूचना क्रांति के चलते खेलों ने भी संचार माध्यमों में अपनी घुसपैठ बना ली है। वीडियो गेमों का ऐसा चलन बढ़ा है कि बच्चे मैदानों में खेलने के बजाय घरों में दुबके रह कर अकेले ये खेल खेलते रहते हैं। इनका बच्चों के शरीर और मन पर क्या और कैसा असर पड़ रहा है।

समय के साथ कदमताल करती तकनीक ने जहाँ हर काम को आसान बनाया है, वहीं आदमी के सामने कुछ मुश्किलें भी खड़ी की हैं। इसका सबसे ज्यादा प्रभाव 'बचपन' पर पड़ा है। एक ऐसी अवस्था में जब बच्चे सबसे ज्यादा अपने परिवार, समाज और दोस्तों के करीब होते हैं, वे अब अकेलेपन के शिकार होकर तकनीक के वशीभूत होते जा रहे हैं। कभी खेल के मैदान में घंटों समय बिताने वाले बच्चों को दोस्तों, साथियों की जगह कंप्यूटर और मोबाइल गेम का साथ भा रहा है। उनकी दुनिया मोबाइल, कंप्यूटर पर उपलब्ध खेलों तक ही सीमित हो गई है। साथी, दोस्त की कमी तकनीक ने ले ली है। इसके गंभीर नतीजे भी सामने आ रहे हैं। तकनीकी खेलों ने न सिर्फ बच्चों को एक सीमित दायरे का कैदी बना कर रख दिया है, बल्कि वे कई तरह की मानसिक और शारीरिक बीमारियों का शिकार भी बन रहे हैं। बीते करीब डेढ़ दशक में बच्चों के खेलने के तरीकों में बड़ा बदलाव आया है। आज करीब नब्बे प्रतिशत बच्चे परंपरागत खेलों के बजाए टीवी, इंटरनेट, ऑनलाइन या ऑफलाइन गेम के साथ समय बिताते हैं। पहले जहाँ लुकाछिपी, गिल्ली डंडा, रस्सी कूद, क्रिकेट, फुटबाल, पतंग उड़ाने जैसे पारंपरिक खेल बच्चों को लुभाते थे, वहीं अब वे इंडोर गेम्स के प्रति ज्यादा आकर्षित हैं। शारीरिक व्यायाम और एकाग्रता वाले खेलों की जगह अब बच्चे हिंसक खेल ज्यादा पसंद करने लगे हैं। इससे उनका मानसिक और शारीरिक विकास बाधित हो रहा है और समाज से वे अलग–थलग पड़ते जा रहे हैं।

ज्यादा समय नहीं बीता जब बच्चों को

किसी टॉफी, समोसे से बहलाना आसान था। बच्चों की जिद दायरे में थी। खुले मैदानों में बच्चे हो-हल्ला करते थे। मगर नब्बे के दशक के बाद से गैजेट्स का जमाना आया और बच्चों की इच्छाएँ इन्हीं तक सीमित हो गईं। कमसिन हाथों में स्मार्टफोन दिखाई देने लगा। कुछ विशेषज्ञ स्मार्टफोन को एक ग्राम कोकीन के बराबर मानते हैं। यानी अपने बच्चे को स्मार्टफोन देना किसी नशे की लत को लगाने के बराबर है। जहाँ आज इससे बचपन बदल रहा है, वहीं कुछ समस्याएँ भी पनप रही हैं। 'बचपन' पहले के मुकाबले कहीं पहले से बड़ा हो गया है। कमसिनी में ही बच्चे हिंसक खेलों की दुनिया में प्रवेश कर रहे हैं। इन खेलों का सबसे बुरा प्रभाव यह है कि अब बच्चों का रुझान सामूहिक खेलों के बजाय अकेले खेले जाने वाले खेलों की तरफ ज्यादा हुआ है। इससे उनमें अकेलेपन की प्रवृत्ति बढ़ रही है। बच्चों में खेल भावना खत्म और उनमें एक तरह की हिंसक प्रवृत्ति जन्म ले रही है। हालांकि इसके लिए सिकुड़ते खेल मैदान और कुछ हद तक माता-पिता का इस शंका से ग्रस्त रहना कि उनके बच्चे बाहर ज्यादा खेलेंगे तो बिगड़ जाएँगे जैसी सोच भी जिम्मेदार है। मगर पिछले साल ब्लू व्हेल जैसे घातक गेम की वजह से जब बच्चे लक्ष्य को पूरा करने को जान देते नजर आए तो ऐसे खेलों को लेकर नजरिया और गंभीर हो गया। वहीं आए दिन क्लास में बच्चों की हिंसक होते झगड़े और हत्या जैसी खबरों, बढ़ते बाल-अपराध ने भी इस ओर सोचने को मजबूर किया है।

दरअसल, शुरू से ही वीडियो गेम बच्चों की मानसिकता को हिंसक बनाते रहे हैं। इस संबंध में मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि इसकी बड़ी वजह है बच्चों का ज्यादातर समय टीवी, वीडियो गेम और कंप्यूटर के संपर्क में रहना है। बच्चे इन गैजेट्स में जो भी देखते हैं, उसे कॉपी करने की कोशिश करते हैं, क्योंकि उनका जीवन घर और स्कूल तक ही सीमित होता है ऐसे में इसका असर भी इन्हीं जगहों पर ज्यादा देखने को मिलता है। इस तरह की मनमानी उन्हें हिंसक और निरंकुश बना रही है। लगातार हिंसक खेलों के संपर्क में रहने की वजह से बच्चे कमसिनी में ही संवेदनशीलता खोने लगते हैं। अक्सर खेलों को दृश्य रूप में देख कर बच्चे खुद को उस खेल का हिस्सा समझते हैं। ऐसे में ऐसे नकारात्मक खेल उन पर हावी हो जाते हैं और वे हिंसक होकर एक तरह की प्रतिस्पर्द्धा करने लगते हैं। उन्हें दूसरों को पीड़ित देख कर अच्छा लगता है। इस प्रवृत्ति का ज्यादा शिकार लड़के बनते हैं। लड़के कहीं न कहीं रचनात्मकता से दूर और काल्पनिक खेलों के दायरे में कैद होकर रह गए हैं। वे घंटों अकेले बैठ कर इनडोर गेम खेलते हैं। ऐसे में इसका असर भी व्यापक स्तर पर देखने को मिलता है। देश-विदेश की ऐसी कई घटनाएँ सामने आईं, जिनमें घंटों बैठ कर गेम खेलना बच्चों की मृत्यु का कारण बना। कुछ अध्ययनों में सामने आया कि जो बच्चे ज्यादातर समय हिंसक वीडियो गेम खेलने में बिताते हैं, उनके लिए हिंसक तस्वीरों को देखना अन्य बच्चों के मुकाबले कहीं आसान होता है। वे इन्हें देख कर विचलित नहीं होते। वे निष्ठुर हो जाते हैं। वे न कोई श्रम करना चाहते हैं और न ही अन्य बच्चों के साथ कोई खेल खेलते हैं। उनमें मोटापे जैसी कई शारीरिक समस्याएँ बढ़ने लगती हैं। वहीं लगातार स्क्रीन को देखते रहने से उनकी आँखों पर सीधा प्रभाव पड़ता है। इसके अलावा समाज से कटे रहने का प्रभाव भी उनके व्यवहार में नकारात्मक बदलाव ला रहा है।

एक क्लिक पर सब कुछ देखने-पाने की चाह रखने वाले बच्चों में संयम कम हो रहा है। वे बात-बात पर हिंसक और अधीर हो रहे हैं। धैर्य के साथ सीखने की आदत छोड़ते जा रहे हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि स्मार्टफोन पर अधिक समय बिताने वाले बच्चे एंग्जाइटी, डिप्रेशन और अटैचमेंट डिसऑर्डर जैसी मानसिक बीमारियों के शिकार बन रहे हैं। इन खेलों को खेलने वाले बच्चों को अपनी बात मनवाने के लिए हिंसात्मक रवैया अपनाते देखा गया है। उन्हें लगता है कि ऐसा व्यवहार करके वे अपनी बात आसानी से मनवा सकते हैं। कुछ विशेषज्ञ बच्चों को किसी गेम की लत लग जाने को मेडिकल भाषा में 'ऑब्सेशन' बताते हैं। वहीं कुछ उन्हें 'कंडक्ट डिसऑर्डर' से ग्रस्त मानते हैं। दरअसल, यह कई सारी व्यावहारिक और भावनात्मक समस्याओं का समूह है, जिसमें बच्चा अपनी बात मनवाने के लिए हिंसक प्रवृत्ति का सहारा लेता है। दूसरों को परेशान करना, जानबूझ कर किसी को शारीरिक नुकसान पहुँचाना जैसी आदतें उनको मजा देती हैं। हालांकि वास्तविकता यह है कि इस हिंसक प्रवृत्ति के पीछे बच्चा खुद को कहीं ज्यादा असुरक्षित और अकेला महसूस करता है।

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि तकनीक आधारित खेलों ने बाल मानसिकता पर गहरा प्रभाव छोड़ा है। पहले यूरोपीय देशों में हिंसक घटनाओं के रूप में इसके दुष्प्रभाव देखने को मिलते थे, लेकिन अब भारत में भी इसके गंभीर नतीजे देखने को मिल रहे हैं। टेलीविजन पर दिखाए जाने वाले हिंसक कार्टून चरित्रों और खेलों ने बाल मानसिकता को प्रभावित किया है। हिंसक खेल बच्चों को शीघ्र बदला लेने की ओर अग्रसर कर रहे हैं। इस मुद्दे पर विश्व स्वास्थ्य संगठन की ओर से जारी आँकड़े चिंता को बढ़ाते हैं। इनके मुताबिक अत्यधिक मार-धाड़ वाले टीवी चैनल, वीडियो गेम को खेलने वाले ज्यादातर बच्चों का ब्लड प्रेशर सामान्य बच्चों के मुकाबले अधिक पाया गया। दरअसल, इस तरह के यांत्रिक गेम के चलन को बढ़ावा इसलिए भी दिया जा रहा है ताकि कंपनियाँ ज्यादा मुनाफा कमा सकें। यही कारण है कि हिंसा को प्रदर्शित करने वाले पिस्टल, बंदूक,

तलवार जैसे एक से बढ़कर एक खिलौने बाजार में छाए हुए हैं, तो वहीं हिंसक गेम भी अपनी मजबूत पकड़ बनाए हुए हैं।

'सुपर मारियो' से 'ब्लू ह्वेल' तक का सफर

इन खेलों से अलग करीब एक दशक पहले वीडियो, मोबाइल गेम की शुरुआत हुई थी। तब 'सुपर मारियो' गेम ने बच्चों को बेहद लुभाया था। 2015 में इसे वर्ल्ड वीडियो गेम हॉल ऑफ फेम में भी शामिल किया गया। यह गेमिक उद्योग को उबारने में मददगार रहा है। इस बीच इस तरह के गेम जितने लोकप्रिय होते गए उतने ही सरल से जटिल भी। अभी तक मनोरंजन तक सीमित रहने वाले खेलों ने एक स्पर्द्धा का रूप ले लिया। इसमें तबाही मचाने वाले मान्स्टर को नियंत्रित करने वाला स्मैशी सिटी, किसी बॉल को छेद में डाल कर खेला जाने वाला गोल्फ आइसलैंड, किसी पहाड़ पर फँसे स्कीयर को नियंत्रित करने का गेम स्की सफारी, मोटरसाइकिल ट्रायल पर आधारित गेम ट्रायल्स फ्रंटियर, एक मछली को नियंत्रित करने के लक्ष्य के साथ खेला जाने वाला हंग्री शार्क वर्ल्ड गेम मशहूर रहे हैं। आज इन खेलों की लोकप्रियता इतनी है कि इनमें दर्शाए युद्ध की तर्ज पर फिल्में भी बन रही हैं। 'लारा क्राफ्ट', 'साइलेंट हिल', 'वारक्राफ्ट', 'नीड फॉर स्पीड' और 'मोर्टल कॉम्बेट' जैसी फिल्में गेम पर आधारित हैं। स्क्रीन पर युद्ध छेड़ने वाले गेम का मानसिक प्रभाव आज इतना बढ़ गया है कि बच्चे इनकी जद में आकर किसी भी तरह की हिंसा करने से नहीं चूक रहे। यहाँ तक कि वे अपनी जान भी दे रहे हैं। पिछले साल आतंक का पर्याय बना रहा 'ब्लू ह्वेल' ऐसा ही गेम है। इसे खेलने वाले कितने ही बच्चे इसका शिकार बने। भारत में भी इसे खेलने वाले कई बच्चों ने इसमें निर्धारित लक्ष्य को पूरा करने के एवज में अपनी जान दे दी।

दौर बारिशों का आज भी है, लेकिन उसमें कागज की कश्ती तैराते बच्चे कम ही नजर आते हैं। माहौल बदला तो बच्चों के खेल-खिलौने और शौक भी बदल गए। कभी गिल्ली डंडा, कंचों, लूडो से होता हुआ बचपन बबल गम चुइंगम, चॉकलेट और वॉकमैन जैसे संगीत छेड़ते साधनों से होता हुआ आज तकनीक आधारित खेलों पर ठहर-सा गया है। मगर आज भी खुले मैदानों में उन अल्हड़ खेलों की सुहानी यादें ताजा हैं-

बोरा दौड़ - किसी बोरी में खड़े होकर कूद-कूद कर अपने लक्ष्य तक पहुँचा जहाँ कौतुहल पैदा करता है, वहीं स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा की भावना को भी बढ़ाता है।

साँप-सीढ़ी- बच्चों में कभी बेहद लोकप्रिय खेल रहा साँप-सीढ़ी आज कहीं गुम हो गया लगता है। एक समय बच्चे इस खेल के दीवाने हुआ करते थे। एक बोर्ड पर सौ तक लिखी गिनती और जगह-जगह बनी हुई सीढ़ियाँ, साँप। इसे पासे के जरिए खेला जाता था। इसमें पासा साँप के मुँह में भी पहुँचा सकता था और सीढ़ियों से बुलंदियों पर भी।

पिट्टू - सात चपटे पत्थर और दो टीमें। इसे खेलने का अपना ही मजा था। बच्चे दो टीमों में बँटकर बच्चे पत्थर पर बॉल मार कर उन्हें गिराते और फिर धमाचौकड़ी शुरू।

घोड़ा बादाम छाई - कपड़े की मदद से खेला जाने वाला यह खेल बच्चों में कौतूहल पैदा करता था। आज बच्चों का बुलंद आवाज शोर, घोड़ा बादाम छाई, पीछे देखी मार खाई कहीं सुनाई नहीं पड़ता।

गिल्ली डंडा - आज भी ग्रामीण इलाकों में यह लोकप्रिय खेल है। एक डंडे की मदद से गिल्ली के सिरे को चोट करके उछालना और फिर दूर गिरी गिल्ली के जरिए स्कोर तय करना इसका नियम है।

छुपम-छुपाई - यह खेल इसलिए भी ज्यादा लोकप्रिय है, क्योंकि इसे बहुत छोटे बच्चे भी खेल सकते हैं। यही वजह है कि अक्सर फिल्मी गीत भी इस पर बने हैं। एक बच्चा आँखें बंद करके खड़ा होता है और अन्य बच्चे कहीं जाकर छुप जाते हैं।

कंचा गोली - शीशे की बनी गोलियों और उंगलियों की मदद से खेला जाता है। एक गड्ढे में कुछ दूरी पर कंचे फेंके जाते हैं। इसमें जिसके पास सबसे ज्यादा कंचे वही विजयी।

चोर-सिपाही - दो टीमों में एक टीम चोर की और एक पुलिस की। चोर की तलाश में जुटी पुलिस टीम जब चोर टीम को पकड़ती है तो बच्चों को बेहद मजा आता है।

आँख-मिचौली - किसी एक की आँखों पर पट्टी बाँध कर दूसरे उसे चिढ़ाते हुए इधर-उधर भागते हैं और आँखों पर पट्टी बाँधे बच्चा उन्हें पकड़ने की कोशिश में लगा रहता है। इस खेल को अक्सर बच्चे बड़ों के साथ भी खेलते हैं। इस तरह के सामूहिक खेलों से बच्चों को कई फायदे होते हैं। एक-दूसरे के साथ मिल कर खेलने से बच्चा समाज से जुड़ता है और उसका मानसिक विकास होता है। उसमें टीम वर्क की भावना आती है। इस तरह के खेल उसके शारीरिक अंगों को मजबूत बनाते हैं।

भारत में जहाँ कबड्डी, कबूतरबाजी जैसे पारंपरिक खेल मशहूर रहे हैं, वहीं दिमाग वालों का खेल कहा जाने वाला 'शतरंज' भी लोकप्रिय रहा है। मोहरों के साथ शह और मात का यह खेल आज भी पसंद किया जाता है। इसी की तर्ज पर कई अन्य एशियाई, विदेशी खेल भी मशहूर रहे हैं। इन्हीं में एशियाई खेल 'गो' जो कि काले और सफेद पत्थरों के साथ एक तख्ती पर खेला जाता है। यह चीन, जापान और कोरिया में काफी मशहूर रहा है। 'शोगी' भी एक तरह की जापानी शतरंज है। इसके अलावा टिक टैक टो एक ऐसा खेल है, जो भारत में भी खासकर किशोरों की पसंद रहा है। कनेक्ट फॉर, चेकर्स, मिल, ऐनो और स्टारक्राफ्ट भी मशहूर गेम हैं। ❑

(साभार-जनसत्ता)

Children are flowers of our national garden they should be nurtured with love and affection so that they grow into responsible and responsive citizens. Keeping this fact in mind, many provisions have been made in the constitution of the country to promote the welfare and development of children. Under Article 29 of the constitution, no child below the age of 14 can be deployed in any hazardous work. Article 23 prohibits forced labour. The chapter IV of the Indian constitution mentions specific directions related to the welfare of children. In Article 39, it is made obligatory for the states to formulate polices in such a way so that the healthy development of children can be ensured.

Child labour: A Necessary Evil

❑ **Dr. Anita Modi**

Now a days, the complex and universal problem of child labour has become a "harsh reality" attracting worldwide attention. The prevalence of child labour is economically unsound, psychologically disastrous and physically as well as morally dangerous. No doubt, labour is worship but child labour is dangerous and a blot on the conscience of society. It is a sad affair that child labour deprives his youthful life, education and thus prospects of higher level of living. Thus, child labour is harmful for the progress and prosperity of a nation. Throwing light on this fact, John has rightly said, "Starve a child of food, of affection, of freedom, of education and you produce an adult who is stunted as an individual and holds back progress and development rather than accelerate it".

Child labour is rampant across the country. Children can be seen working in agriculture fields, carpet and durri industries, bidi, handicraft, matchbox, glass and bangle industries, in restaurants and as domestic servants. It is estimated that 30 per cent of child labour is engaged in agriculture and allied activities, 30 to 35 per cent in industries and remaining are engaged in mining, tea gardens and hotels etc. These occupations are hazardous, causing severe physical damage to them and thus inhibiting their mental, moral and social development. These child laboures become prey to many fatal diseases, like T.B., Cancer, Asthma, lungs and skin related diseases. The sad plight of child labor is depicted by Sudha and Tiwari in these words, "It is really sad to note that children in most of the developing countries are living miserable, cheerless lives, toiling endlessly to ward off starvation, totally deprived of all comforts and opportunities for self-growth and development."

Child labour has important demographic and social-economic implications for developing countries like India.Poverty, unemployment, traditional attitude, marginalization of farms, urbanization, lack of schools, reluctance of parents to send their children to schools are the factors responsible for the problem of child labour. In fact, poverty is seen as the major factor responsible for this problem. Poor parents hardly have time for their children because they are

all the time struggling for bread and butter. They are not in a position to fulfill their responsibilities towards children. In reality, the children are supposed to be the extra earning hands, rather than extra mouths to feed. Children are made to work at a very young age. Emphasizing this factor, the report of the Committee on Child Labour commented, "Stronger than tradition is the factor of chronic poverty responsible for the prevalence and perpetuation of child Labour". In poor families, the child, since his very appearance in this world, is endowed with an economic mission. The child is compelled to shed sweat of brow "to keep the wolf away from the door". Large sized families are also held responsible for this problem. Again, most of the workers are engaged in non-organized sector. The inadequacy of wages in this sector compels these workers to send their children on work to supplement their lowincome. Availability of child Labour at lower wages also motivates the employers to employ them. The employment of the child Labour not only reduces the cost of production but also provides access to that Labour which is unresisting and unorganized. As a result of this trend, the wages of other adult workers decline, adult unemployment increases and that paves way for the poverty. This vicious circle of poverty explains the phenomenon of child Labour clearly. Thus, the compulsion of poor parents is responsible for this problem.

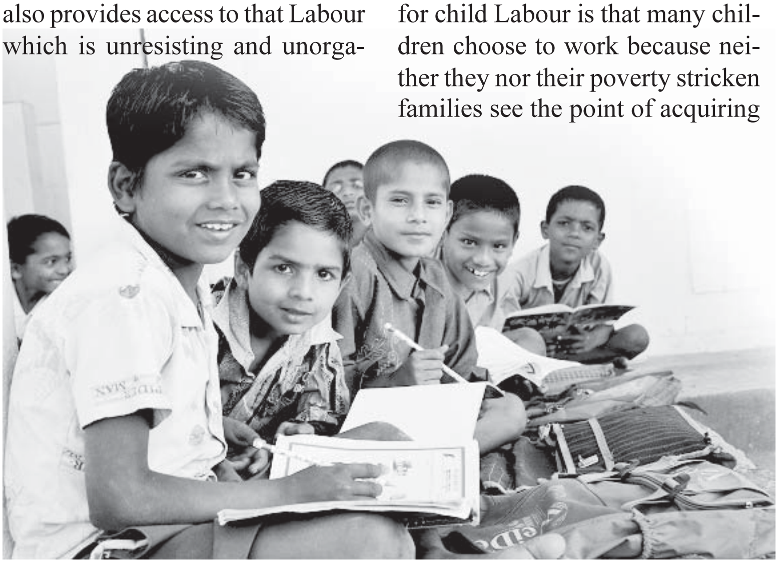

The situation of child Labourers in India is desperate. Children work for eight hours at a stretch with only a small break for meals. Most of the migrant children, who cannot go home, sleep at their work place, which is very bad for their health and development. Seventy five per cent of Indian population still resides in rural areas and are very poor. Children in rural families who are ailing with poverty perceive their children as an income generating resource to supplement the family income. Parents sacrifice their children's education to fulfill the basic needs of their younger siblings and view them as wage earners for the entire family. Irrelevance of education in practical life is also considered an important factor for this problem. It is rightly pointed out, "A secondary reason for child Labour is that many children choose to work because neither they nor their poverty stricken families see the point of acquiring an education which has little relevance to their lives and which moreover does not guarantee them a job. They prepare to undergo some kind of apprenticeship so that they can learn a skill and earn money at the same time". These children are deprived of their childhood. The prospects of getting good education and good jobs become a distant dream for them. Thus, the parents, society and the state are responsible for this criminal injustice with the future citizens.

Children are flowers of our national garden they should be nurtured with love and affection so that they grow into responsible and responsive citizens. Keeping this fact in mind, many provisions have been made in the constitution of the country to promote the welfare and development of children. Under Article 29 of the constitution, no child below the age of 14 can be deployed in any hazardous work. Article 23 prohibits forced labour. The chapter IV of the Indian constitution mentions specific directions related to the welfare of children. In Article 39, it is made obligatory for the states to formulate polices in such a way so that the healthy development of children can be ensured.

To safeguard the interests of these deprived children, various laws have been enacted in the country. Many legislations have been passed to prevent the employment of children in hazardous occupations and to improve their working conditions. Many policies have also been formulated for the healthy and balanced development of children. Some important legislations which provide legal protection to child labour in India are following:

1. Child (Pledging of labour). Act (Government of India, 1933)

2. The Employment of Children Act (Government of India, 1938)
3. The Minimum Wages Act, 1948
4. The Factories Act, 1948
5. The Plantation Labour Act, 1951
6. The Mines Act, 1952
7. The Merchant Shipping Act, 1958
8. The Motor Transport Workers Act, 1961
9. The Apprentices Act, 1961
10. The Bidi and Cigar Workers Act, 1966
11. State Shops and Establishment Acts,

According to the National Policy for children, 1974, no child under 14 years can be engaged in any hazardous occupation. It is also laid down in the policy that children should be protected against neglect, cruelty and exploitation. Again, the Child Labour (Prohibition and Regulation) Act was initiated in 1986 to ban children's employment in 70 hazardous occupations. National Child Labour Project (NCLP) was also launched by Labour Ministry in 1988 to rehabilitate working children. In Oct, 2006, the Government has passed legislation to ban the employment of children below 14 years in restaurants, hotels, tea-stalls, eateries and as domestic Labourers.

India has also become a signatory to various international declarations and agreements to regulate the menace of child labour. So, it has become obligatory for the country to undertake the measures to eliminate the scourge of child labour which has assumed serious proportions in recent years.

Many policies have been formulated for the healthy and balanced development of children. The Government has launched SarvaShikshaAbhiyan, Mid-Day Meal Scheme, Education Guranteeprogramme etc. to bring the child labour under the umbrella of education. Non-Governmental Organizations were also permitted to open residential schools for these children to bring them back to the mainstream of the society. Residential and special schools have also been setup for the education of child Labour. In 2006 the Government has introduced Integrated Child Development Services aimed at providing a package of services consisting of supplementary nutrition, immunization, health checkup and education and non-formal education.

In spite of adoption and implementation of various policies, laws and programmes by the government directly or indirectly, the problem of child Labour is still staring at us. Due to ignorance, illiteracy and economic compulsions of the poor families, these laws are evaded at different places at different points of time. Weak enforcement machinery, little information related to child labour laws and peculiar socio-economic conditions are also the factors responsible for the avoidance of laws related to children. To check the problem of child laour, it is essential to eradicate the menace of poverty by improving agriculture sector, providing employment to unemployed hands at minimum wages, establishing agro-processing units in rural areas. Stringent measures should also be taken to make employment generation and poverty eradication plans effective, successful and corruption free. In the same way, population control measures and other medical facilities must be provided to the poor section of the country. Adequate school facilities, provision of night schools, improvement in school environment and curricula of education can also contribute a lot in solving this critical problem. National Commission for Protection of Child Rights (NCPCR) should also ensure that rescued child labourers do not return to work. So every effort must be made for the repatriation of rescued child labourers to their native places. . Poverty, unemployment and illiteracy are the prime reasons responsible for this problem. So efforts must be made to eradicate these causes. Monetary incentives and income generating assets must be provided to poor families so that they are not compelled to send their children to work. It is essential to compensate the families of those children who are being withdrawn from work force. A strong socio-political environment must be achieved with the active cooperation of people, society, and non-government organization. NGOs must motivate the parents to provide education, health care and skill development facilities to their children. Special schools may be set up for the child Labour so they can acquire minimum qualifications. In the same way, specific strategies must be evolved keeping in mind the nature of work in which the child is currently engaged. Thus, a joint effort of government, NGOs and society is required to solve this critical problem. We should try to strike at the root cause of this critical problem. Efforts should be made to change the attitude and mindset of the people towards their children. We should never forget that today's children are tomorrow's citizen. If this critical problem is not tackled urgently, we can well imagine the future of our country in the days to come. ❑

(Lecturer, Govt. College,
Khetri, Jhunjhunu, Rajasthan)

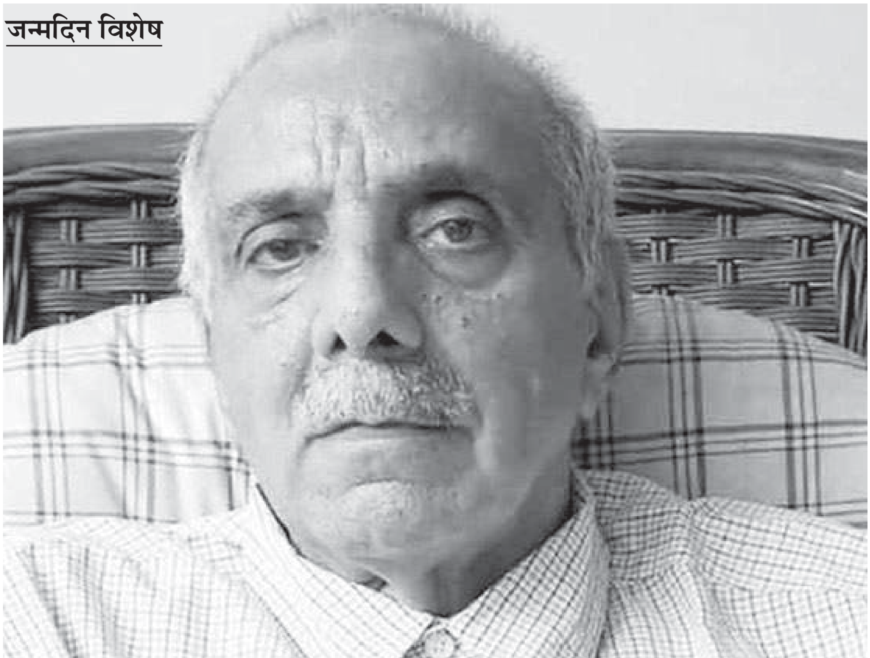

भारतीय राजनीति के वर्तमान को समझने के लिए इतिहास की मदद ले तो उसमें कई ऐसे पृष्ठ मिलते हैं जिन पर धूल जम गई है। ऐसा ही एक पृष्ठ है प्रोफेसर बलराज मधोक। मुख्यधारा को दिशा देने वाले भी कभी गुमनामी की गुफा में खो जाते हैं इसका उदाहरण है भारतीय जनसंघ के पूर्व सचिव प्रोफेसर बलराज मधोक। जिस कश्मीर समस्या से हम आज भी जूझ रहे हैं उसको प्रारम्भ में ही नष्ट करने का प्रयास प्रोफेसर मधोक ने किया था। तत्कालीन शासकों ने मधोक की बात नहीं सुनी। भारत देश की विशाल काया पर कश्मीर समस्या का वह छोटा घाव आज नासूर बन गया है। अकल्पनीय जन-धन की हानि होने पर भी ठीक होने का कोई संकेत दिखाई नहीं दे रहा है।

जन्मदिन विशेष

25 फरवरी 1920 से 02 मई 2016

प्रोफेसर बलराज मधोक

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

भारतीय राजनीति के वर्तमान को समझने के लिए इतिहास की मदद लें तो उसमें कई ऐसे पृष्ठ मिलते हैं जिन पर धूल जम गई है। ऐसा ही एक पृष्ठ है प्रोफेसर बलराज मधोक। मुख्यधारा को दिशा देने वाले भी कभी गुमनामी की गुफा में खो जाते हैं इसका उदाहरण है भारतीय जनसंघ के पूर्व सचिव प्रोफेसर बलराज मधोक। जिस कश्मीर समस्या से हम आज भी जूझ रहे हैं उसको प्रारम्भ में ही नष्ट करने का प्रयास प्रोफेसर मधोक ने किया था। तत्कालीन शासकों ने मधोक की बात नहीं सुनी। भारत देश की विशाल काया पर कश्मीर समस्या का वह छोटा घाव आज नासूर बन गया है। अकल्पनीय जन-धन की हानि होने पर भी ठीक होने का कोई संकेत दिखाई नहीं दे रहा है।

जीवन परिचय

बलराज मधोक का जन्म जम्मू कश्मीर में 7000 फुट ऊँचाई पर सिन्धु नदी के किनारे बसे अस्कार्दू (वर्तमान बल्टीस्थान) स्थान पर हुआ था। उस समय अस्कार्दू लद्दाख प्रान्त की शीतकालीन राजधानी हुआ करता था। पिता जगन्नाथ मधोक पंजाब के गुजरांवाला जिले के जालेन गाँव के रहने वाले थे। सरकारी नौकरी जगन्नाथ जी को अस्कार्दू ले आई थी। माँ सरस्वती देवी गृहस्थी संभालने वाली सामान्य महिला थी। प्रारम्भिक शिक्षा श्रीनगर तथा स्नातक की उपाधि दयानंद आर्य वैदिक महाविद्यालय जम्मू से स्वर्ण पदक के साथ प्राप्त की। इसके साथ प्राप्त 25 रुपए प्रतिमाह की छात्रवृति के कारण बलराज अधिस्नातक अध्ययन पूरा कर सके। अध्ययनशील होने के साथ बलराज हॉकी के अच्छे खिलाड़ी व अच्छे एथलीट थे। 1936 में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सम्पर्क में आए मधोक 1942 में पूर्णकालिक कार्यकर्ता बन जम्मू-कश्मीर में संगठन खड़ा करने में जुट गए।

कश्मीर समस्या

दयानंद आर्य वैदिक कॉलेज श्रीनगर में 15 अगस्त 1947 को विद्यार्थियों को संबोधित करते

हुए प्रोफेसर मधोक ने भारत के विभाजन को कृत्रिम व अस्थायी बताया था। मधोक की मान्यता थी कि जब तक पाकिस्तान का अस्तित्व रहेगा, वह भारत का स्थायी शत्रु बना रहेगा। मधोक की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई है। 1947 में प्रोफेसर मधोक द्वारा प्रकट की गई पाकिस्तान के साथ युद्ध की संभावना, उसके बाद हुए कई युद्धों के बाद भी समाप्त नहीं हुई है। कूटयुद्ध निरन्तर आज भी जारी है।

प्रोफेसर मधोक का प्रयास बयानबाजी तक सीमित नहीं था। कश्मीर में घुसे पाकिस्तानी घुसपैठियों से श्रीनगर को बचाने में प्रोफेसर मधोक ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। प्रोफेसर मधोक ने बिना किसी आधार पर कश्मीर की सत्ता शेख अब्दुल्ला को सौंपने का विरोध किया था। शेख अब्दुल्ला के सत्ता में आने पर मधोक जम्मू चले गए और प्रजा परिषद् के माध्यम से कश्मीर का भारत में पूर्ण एकीकरण करने का आन्दोलन चलाया। मधोक धारा 370 के विरोधी थे। मधोक का विरोध नीतिगत था। उनका कहना था कि सभी प्रान्तों में लाखों मुसलमानों ने अपनी इच्छा से हिन्दोस्तान में रहना पसन्द किया है तो केवल कश्मीर के मुसलमानों का तुष्टीकरण अनुचित है। शेख अब्दुल्ला ने, कश्मीर महाराजा द्वारा, कश्मीर के भारत में विलय को स्वीकार नहीं किया था। शेख अब्दुल्ला जनमत संग्रह का राप अलापते रहे जो देश हित के विपरीत था। यदि उस वक्त की परिस्थितियों में चुनाव करवाना संभव नहीं था तो भी सत्ता, अकेले शेख अब्दुल्ला के बजाय राज्य के तीनों संभागों जम्मू, लद्दाख और कश्मीर के जन प्रतिनिधि मंडल को सौंपी जानी थी।

शेख अब्दुल्ला के वंशज आज भी कश्मीर के विषय में देश की नीति के विपरीत अपना अलग राग अलाप रहे हैं। यदि प्रोफेसर मधोक की बात मानी गई होती तो देश एक स्थायी समस्या से बच गया होता। जो धन पाकिस्तान व उसके घुसपैठियों से कश्मीर की रक्षा पर खर्च किया जा रहा है वह कश्मीर के विकास पर खर्च हो सकता था। कश्मीर की सत्ता शेख अब्दुल्ला के हाथ में आने पर बलराज मधोक का जम्मू कश्मीर में रहना निरापद नहीं रहा और मजबूरन उन्हें दिल्ली आना पड़ा था। बलराज मधोक का विवाह कमला जी से हुआ जो दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर थी। इनके दो पुत्रियाँ हुई।

राजनैतिक जीवन

1948 में दिल्ली आकर मधोक फिर अध्यापन कार्य से जुड़ गए। मधोक दिल्ली विश्वविद्यालय के पंजाबी कॉलेज में पढ़ाया करते थे। बाद में मधोक डीएवी पीजी कॉलेज में इतिहास विभाग के प्रमुख भी रहे थे। विद्यार्थी परिषद, भारतीय जनसंघ के संस्थापक सदस्य रहे मधोक, भारतीय जनसंघ के अध्यक्ष बने। मधोक के नेतृत्व में भारतीय जनसंघ ने पहली बार देशभर में चुनाव लड़ा और 35 सीटें जीती। वह खुद भी दूसरी बार दिल्ली से सांसद बने। इसके बाद ही जनसंघ की विपक्षी दल के तौर पर पुख्ता पहचान बनी थी। पंजाब में जनसंघ की संयुक्त सरकार बनी थी जबकि उत्तर प्रदेश, राजस्थान सहित देश के 8 प्रमुख राज्यों में जनसंघ मुख्य विपक्षी दल बनकर उभरा था। यह एक बड़ी उपलब्धि थी। यही मधोक के राजनैतिक जीवन का उच्चतम शिखर था।

आपातकाल के दौरान मधोक 18 महीने तक मीसा कानून के तहत जेल में बंद रहे। आपातकाल समाप्त होने पर सभी विरोधी दलों ने मिलकर जनता पार्टी का गठन किया तो मधोक उसमें सम्मिलित हुए। बाद में अखिल भारतीय जनसंघ बनाकर उसे आगे बढ़ाने का प्रयास किया। इस कार्य में मधोक को सफलता नहीं मिली। मधोक समय समय पर देश की राजनीति पर विचार रखते रहे मगर जनमत को प्रभावित नहीं कर पाए। मधोक अपनी मृत्यु तक गुमनामी में डूबते चले गए।

अच्छे लेखक

बलराज मधोक बहुत अच्छे लेखक थे। मधोक ने हिंदी व अंग्रेजी में बहुत साहित्य रचा है। समाचार पत्रों के संपादक भी रहे। मधोक ने भारतीय जनसंघ के संस्थापक श्यामा प्रसाद मुखर्जी की जीवनी भी लिखी है। मधोक के उपन्यास 'जीत या हार' को मधोक की आत्मकथा माना जाता है। विभाजित भारत में मुस्लिम व कश्मीर समस्या पर भी बहुत लिखा है। पाकिस्तान के भविष्य पर भी मधोक ने कलम चलाई है। प्रोफेसर मधोक के देशहित विचारों का अध्ययन कर लाभ लिया जाना चाहिए। बलराज मधोक को वाकणकर व वीर सावरकर पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

बलराज मधोक आज हमारे बीच नहीं है मगर उनका जीवन कई सीख दे जाता है। उनकी देशभक्ति व विचार अनुकरणीय हैं। मधोक के मुख्यधारा की राजनीति से अलग होने का लाभ तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने उठाना चाहा था। कहते हैं कि श्रीमती इंदिरा गाँधी ने मधोक को मंत्रीमण्डल में लेने का प्रस्ताव दिया था। साधारण राजनेता उस अवसर का लाभ अवश्य उठाता मगर मधोक ने स्वीकार नहीं किया। बलराज मधोक का जीवन हमें यह भी बताता है कि अपने को बुद्धिमान मानकर, खरी खरी कहना, दूसरों का अपमान करना प्रजातन्त्र में नहीं चल सकता। साथ वालों को अपनी बात से सहमत करना भी आवश्यक होता है। सबका साथ सबका विकास की बात करनी होती है। बलराज मधोक की मृत्यु के अवसर पर डॉ. हर्षवर्धन द्वारा किया ट्वीट, 'भारत ने एक महान् बुद्धिजीवी, विचारक और समाज सुधारक खोया है', बलराज मधोक का उचित मूल्यांकन है। ❑

(बाल साहित्य एवं विज्ञान विषयक लेखक)

पुस्तक समीक्षा

रामकथा से परिवार का महत्त्व समझाती –'कुटुम्ब प्रबोधन'

'वसुधैव कुटुम्बकम्' का उद्घोष करते हुए भारतीय ऋषियों ने सम्पूर्ण वसुधा अर्थात संसार को ही अपना परिवार माना है। भारतीय संस्कृति में कुटुम्ब का अर्थ संयुक्त परिवार की अर्वाचीन परम्परा है। यदि मैं ये कहूँ कि विश्व भर में संयुक्त परिवार की यह अवधारणा केवल भारत में ही युगों से विद्यमान रही है तो भी कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। संसार को परिवार के मायने सिखाने वाले भारत के परिवारों में जिस ग्रंथ के भाव और आदर्श गहरे बसे हुए हैं, दादी–नानी से लेकर बच्चों तक में जिसकी पावन कथा लोकप्रिय है, वह गोस्वामी तुलसीदास रचित रामचरितमानस की श्रीरामकथा। प्रत्येक परिवार में स्नेह, त्याग, समरसता, समादर, संवेदनशीलता, शुचिता, धैर्य और नि:स्वार्थ सहचर्य के जो मूल्य होने चाहिए, उन्हें रामचरितमानस में प्रस्तुत कुटुम्ब के आदर्श चित्रण से सहज समझा जा सकता है। रामचरितमानस जीवन की स्वीकृति का ग्रंथ है, परिवार, समाज और राष्ट्र के उत्थान तथा प्रबोधन का ग्रंथ है जिसमें एक सुखी, स्वस्थ, संस्कारित, आदर्श परिवार एवं समाज की कल्पना की गयी है। श्रीरामकथा के चयनित प्रेरक प्रसंगों के माध्यम से नयी पीढ़ी को परिवार के इन्हीं मूल्यों के लिए प्रेरित करने का एक सार्थक–अनूठा प्रयत्न है आदरणीय हनुमानसिंह राठौड़ द्वारा लिखित सद्य प्रकाशित पुस्तक 'कुटुम्ब प्रबोधन'।

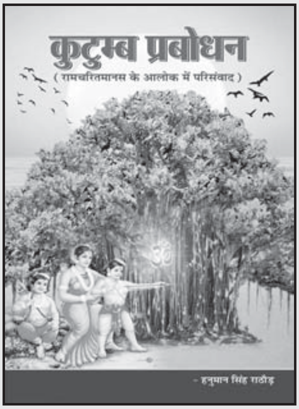

पुस्तक	–	**कुटुम्ब प्रबोधन**
लेखक	–	**हनुमान सिंह राठौड़**
प्रकाशक	–	अ.भा.रा.शैक्षिक महासंघ
सहयोग राशि	–	80/–
समीक्षक	–	**उमेश कुमार चौरसिया**

पाश्चात्य विकृति के प्रभाव ने आधुनिक भारतीय समाज को भी भौतिकता के अंधकार में कहीं घेर लिया है। दिग्भ्रमित पीढी से संस्कृति, संस्कार, नैतिकता, धर्म जैसे उदात्त आदर्श दूर होते दिख रहे हैं। यही कारण है कि आज भारतीय घर–परिवारों में भी बिखराव की स्थितियाँ प्रत्यक्ष हो रही हैं। आज जब विश्व के अनेक लोग भारतीय परिवार परम्परा को अपनाने के लिए लालायित हो रहे हैं तब आवश्यकता है कि भारतीय समाज को भी फिर से परिवार में व्यवहार की हमारी ताकत का भान कराया जाए। श्रीरामकथा में हनुमान को वीरता का भान कराने का दायित्व जामवन्त ने निभाया था, वैसे ही नयी पीढ़ी को भारतीय संस्कृति के आदर्शों की शक्ति और सामर्थ्य का ज्ञान कराने की जिम्मेदारी का निर्वहन इस पुस्तक के द्वारा श्री हनुमान सिंह कर रहे हैं। श्रीरामकथा भारतीय संस्कृति का उज्ज्वलतम प्रतीक है। इसीलिए इस पुस्तक में श्रीराम के जीवन चरित्र के पंद्रह प्रेरणादायी प्रसंगों का चयन करके उन्हें माँ और बच्चों के रोचक संवादों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। प्रकाशक ने इसे गद्य–नाट्य शैली कहा है जो सर्वथा उचित ही है, क्योंकि संवादों को इस तरह से कुशलता के साथ पिरोया गया है कि पढ़ते समय ऐसा प्रतीत होता है मानो मंच पर कोई दृश्य प्रकट हो रहा हो। इसी रोचक शैली और सरस भाषा विन्यास के कारण कथानक और उसमें निहित भाव सहजता से मन–मस्तिष्क में उतरता जाता है। बालपन की सरलता, व्यवहार की मृदुलता, छोटों से स्नेह व गुरुजनों और बड़ों का आदर, नि:स्वार्थ कर्तव्यपालन, राष्ट्र से प्रेम इत्यादि जीवनमूल्यों को समझाती यह पुस्तक व्यक्ति, परिवार और समाज में कुटुम्ब की भाँति समन्वय और व्यवहार को सिखाती है। इसीलिए कुटुम्ब के लिए प्रबोधन करने वाली यह पुस्तक सार्थक और प्रत्येक परिवार के लिए उपयोगी है। ❑

– उमेश कुमार चौरसिया

सदस्य, राजस्थान साहित्य अकादमी

हि.प्र. शिक्षक महासंघ का हमीरपुर में कर्तव्यबोध

हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ जिला हमीरपुर द्वारा राजकीय कन्या वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला हमीरपुर के सभागार में कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता महासंघ के प्रान्त महामंत्री जगबीर चंदेल ने की। उन्होंने शिक्षक समाज से आह्वान किया कि वे राष्ट्र हित, शिक्षा हित, शिक्षार्थी हित व समाज हित में समर्पण भाव से कार्य करें क्योंकि समाज की हमसे बहुत सारी अपेक्षाएँ हैं। उन्होंने कहा कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में तो शिक्षक का दायित्व और भी बढ़ जाता है और देश के नव निर्माण हेतु चरित्रवान नागरिकों का निर्माण तभी संभव हो सकेगा जब शिक्षा शाश्वत जीवन मूल्यों पर आधारित होगी। कार्यक्रम की मुख्यवक्ता प्रोफेसर सरोज ठाकुर ने स्वामी विवेकानंद जी के जीवन पर प्रकाश डालते हुए 'कर्त्तव्य' का महत्त्व समझाया। अपने उद्बोधन में उन्होंने कहा कि स्वामी विवेकानंद जी के विचार आने वाले हजारों वर्षों तक विश्व का मार्गदर्शन करते रहेंगे। अपने शरीर का ध्यान न रखते हुए स्वामी विवेकानंद जी ने भारतीय संस्कृति और भारतीय विचारों को पूरे विश्व में फैलाने का कार्य किया। हम सभी को उनके जीवन से प्रेरणा लेते हुए उनके बताये कर्तव्य के मार्ग पर आगे बढ़ने का प्रण लेना चाहिए।

रुक्टा राष्ट्रीय का प्रान्तीय अधिवेशन बीकानेर में सम्पन्न

राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) का 56वाँ प्रांतीय अधिवेशन राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय बीकानेर में 8 एवं 9 जनवरी, 2018 को सम्पन्न हुआ। अधिवेशन में प्रदेश भर के 2000 से अधिक शिक्षकों ने हिस्सा लिया। अधिवेशन के प्रथम दिवस देराश्री व्याख्यान माला के मुख्य वक्ता दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर एवं सुप्रसिद्ध चिन्तक एवं प्रखर विचारक प्रो. राकेश सिन्हा रहे। प्रो. सिन्हा ने अपने उद्बोधन में मानव के विकास के लिए विचारों व मूल्यों की आवश्यकता सबसे महत्त्वपूर्ण बताई। उन्होंने कहा कि वामपंथी व मैकालेवादी छद्म बुद्धिजीवियों ने अपनी बाईनरी मीमांसा से समाज को बाँटने का कार्य किया और मैं व तुम के रूप में समाज को विभाजित किया। इन्होंने राज्याश्रय में बौद्धिकता के कृत्रिम मापदण्ड घोषित व स्थापित करने का प्रयास किया परन्तु वर्तमान में जिस प्रकार मुस्लिम महिलाओं ने मुस्लिम पुरुषों के छद्म आधिपत्य का स्वत: स्फूर्त विरोध किया उसी प्रकार भारतीय जनमानस ने इन वामपंथी-मैकालेवादियों को हाशिए पर धकेल दिया। कार्यक्रम की अध्यक्षता महाराजा गजसिंह विश्वविद्यालय बीकानेर के कुलपति प्रो. भगीरथ सिंह बिजारणियाँ ने की।

अधिवेशन के उद्घाटन सत्र में मुख्य अतिथि राजस्थान सरकार की उच्च शिक्षा मंत्री श्रीमती किरण माहेश्वरी, विशिष्ट अतिथि अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के अध्यक्ष श्री जे.पी. सिंघल एवं स्वागत अध्यक्ष प्रो. बी. आर. छीपा रहे। विशिष्ट अतिथि श्री जे.पी. सिंघल ने अपने उद्बोदन में अ.भा.रा.शै. महासंघ की विशिष्ट वैचारिक आधारभूमि पर प्रकाश डाला, जिसमें शिक्षकों के अधिकार के बजाय उनके कर्त्तव्यों को संगठन के चिन्तन का केन्द्र बताया।

अधिवेशन में कर्त्तव्यबोध विषय पर प्रकाशित स्मारिका '**कर्मण्येवाधिकारस्ते**' का विमोचन भी अतिथियों द्वारा किया गया। रुक्टा (रा.) के महामंत्री डॉ. नारायणलाल गुप्ता ने एक वर्ष पूर्व की गई पदनाम परिवर्तन की घोषणा हेतु राज्य सरकार, माननीय मुख्यमंत्री व शिक्षामंत्री के प्रति आभार व्यक्त किया और साथ ही इस घोषणा के क्रम में हुई प्रगति के प्रति शिक्षक समुदाय के मन में उत्पन्न हो रही उत्कंठाओं को भी मुखरित किया। उन्होंने शिक्षकों की विभिन्न न्यायोचित माँगों तथा इनकी पूर्ति में नौकरशाही द्वारा डाले जाने वाले अवरोधों पर प्रकाश डालते हुए आशा व्यक्त की, कि माननीय श्रीमती किरण माहेश्वरी के सहानुभूतिपूर्ण व सक्रिय सहयोग के बल पर शिक्षकों की समस्त समस्याओं का समाधान हो सकेगा। इसके प्रत्युत्तर में मंत्री महोदया ने पदनाम परिवर्तन के आदेश इसी माह में जारी होने का आश्वासन दिया है। शिक्षकों के रिक्त पदों पर भर्ती की दिशा में हो रही प्रगति पर भी मंत्री महोदया ने विस्तार से प्रकाश डाला। श्रीमती माहेश्वरी ने कॉलेजों में प्राचार्य व उपाचार्य पदों के लिए लम्बित डी.पी.सी. को शीघ्र करवाने, पी.टी.आई., लाईब्रेरियन, प्रयोगशाला सहायक व लिपिक आदि के रिक्त पदों पर भी शीघ्र नियुक्ति देने का आश्वासन दिया। शिक्षक सम्मान की दिशा में भी मंत्री महोदया ने आगामी शिक्षक दिवस से श्रेष्ठ कॉलेज शिक्षकों को भी राज्य सरकार द्वारा सम्मानित किये जाने की घोषणा की।

उद्घाटन सत्र के पश्चात् सायंकाल खुला सत्र आयोजित किया गया, जिसमें महामंत्री प्रतिवेदन एवं गत वित्तीय वर्ष के आय व्यय का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया गया। इसी सत्र में साधारण सभा द्वारा तीन प्रस्ताव पास किए। 1. मानवाधिकारों का संरक्षण कर्तव्यपालन में ही है, 2. शिक्षा को नौकरशाही से मुक्त किया जाए तथा 3. शिक्षक समस्या का समाधान प्राथमिकता से किया जाए। 8 जनवरी की सायंकाल ही बीकानेर में निवास कर रहे 50 सेवानिवृत शिक्षकों को संगठन द्वारा शाल, श्रीफल एवं स्मृति चिन्ह भेंट कर सम्मानित किया गया। आठ जनवरी की रात्रि को सभी शिक्षक साथियों के सम्मान में एक सांस्कृतिक संध्या का आयोजन किया गया। इसमें स्थानीय महाविद्यालय की छात्राओं एवं जाने माने कलाकारों ने भवाई नृत्य, चकरी नृत्य, लोक गीत, सूफी गीत एवं सुदर्शना कन्या महाविद्यालय की छात्राओं द्वारा देश भक्ति गीत प्रस्तुत किये। अंत में संगठन के अध्यक्ष डॉ. दिग्विजय सिंह एवं अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के अध्यक्ष श्री जे.पी. सिंघल ने कलाकारों को सम्मानित किया।

अधिवेशन के द्वितीय दिवस 9 जनवरी को '**उच्च शिक्षा में परीक्षा एवं मूल्यांकन: दशा और दिशा**' विषय पर संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें मुख्य वक्ता राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अध्यक्ष डॉ. बी.एल.चौधरी तथा विशिष्ट अतिथि अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर रहे। डॉ. चौधरी ने बोर्ड द्वारा परीक्षा प्रश्न पत्र निर्माण तथा परीक्षा प्रश्न पत्र निमार्ताओं की ग्रेडिंग व मूल्यांकन पद्धति में किये जाने वाले प्रयोगों को विश्वविद्यालय स्तर पर भी लागू करने की आवश्यकता जताई। श्री कपूर ने शिक्षा के क्षेत्र में आने वाली चुनौतियों के मुकाबले के लिए आदर्श चरित्र वाले शिक्षकों की आवश्यकता पर बल दिया। संगोष्ठी में डॉ. अम्बिका ढ़ाका, डॉ. पी. डी. राजौरा, डॉ. विष्णु दत्त दवे, डॉ. बबीता जैन, डॉ. ओमप्रकाश पारीक, डॉ. रचना तैलंग आदि शिक्षकों ने अपने शोध- पत्र प्रस्तुत किये।

समारोप कार्यक्रम के मुख्य वक्ता राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अ.भा.बौद्धिक प्रमुख श्री स्वांतरंजन ने अपने उद्बोधन में शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रीयता व चरित्र निर्माण का समावेश करने का आह्वान किया। उन्होंने कहा कि आचार्य वही हो सकता है, जो अनेक शास्त्रों का अध्ययन करे, स्वयं श्रेष्ठ आचरण करे तथा दूसरों से श्रेष्ठ आचरण करवाए। अधिवेशन में श्री दुगार्दास जी, श्री हनुमान सिंह राठौड़, डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल, डॉ. ग्यारसीलाल जाट, श्री जसवंत खत्री जैसे गणमान्य व्यक्ति भी उपस्थित रहे। इस अवसर पर अध्यक्ष डॉ. दिग्विजय सिंह ने अधिवेशन की सफलता के लिये सभी शिक्षक साथियों तथा अतिथियों का आभार प्रकट किया।

रुक्टा (राष्ट्रीय) ने प्रदेश भर में कर्त्तव्य बोध दिवस मनाया

राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) की विभिन्न इकाइयों ने अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की योजनानुसार वर्ष पर्यन्त स्थायी कार्यक्रमों की शृंखला में दिनांक 12 जनवरी से 23 जनवरी के मध्य विभिन्न इकाइयों द्वारा इकाई स्तर पर 'कर्त्तव्य बोध दिवस' मनाया गया, जिसमें समाज के मूर्धन्य विद्वानों, संतों, सामाजिक कार्यकर्ताओं एवं शिक्षाविदों द्वारा दायित्व बोध हेतु प्रभावी व्याख्यानों का आयोजन किया गया।

राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर में आयोजित कार्यक्रम में मुख्यवक्ता रुक्टा (राष्ट्रीय) के संगठन मंत्री डॉ. ग्यारसीलाल जाट ने शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों, महाविद्यालय व समाज राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वों को ठीक प्रकार से समझने और निर्वहन करने का पाथेय प्रदान किया।

राजकीय कन्या महाविद्यालय, श्रीगंगानगर में मूक-बधिर व अंधविद्यालय के संस्थापक स्वामी ब्रह्मदेवजी ने अपने उद्बोधन में कहा कि जैसे हमारे विचार होंगे, वैसे कर्म बनेंगे और वैसा ही समाज निर्मित होगा। अत: हमारे विचारों से शुद्धता व कर्मों में निर्लिप्तता रखनी चाहिए।

राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सवाईमाधोपुर में आयोजित कार्यक्रम में मुख्यवक्ता राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के विभाग प्रचारक श्री पवन ने कहा कि राष्ट्र निर्माण में युवकों का प्रमुख योगदान होता है। प्राध्यापक युवाओं के निर्माण में महती भूमिका निभाते हैं, अत: उन्हें स्वयं के प्रति विषय के प्रति अपने विद्यार्थियों के प्रति और अंत में समाज व राष्ट्र के प्रति समर्पण भाव से कार्य करना चाहिए।

जयपुर स्थित आयुक्तालय, संगीत संस्थान व स्कूल ऑफ आर्टस् के संयुक्त कार्यक्रम में विषय प्रवर्तन करते हुए रुक्टा (राष्ट्रीय) के सहसंगठन मंत्री डॉ. दीपक शर्मा ने कहा कि गुरु विद्यार्थियों को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने वाला माध्यम होता है। अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के अध्यक्ष श्री जे. पी. सिंघल ने मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए शिक्षकों का आह्वान किया कि वे सिर्फ विषय सामग्री तक सीमित न रह कर पूरे समाज के शिक्षक बने। शिक्षकों को अपने आचरण में कथनी व करनी का भेद समाप्त कर अपने कृतित्व से समाज का प्रेरणा पुञ्ज बनने का प्रयास करना चाहिए।

सिरोही के गुरुकुलम् संस्थान में राजकीय महाविद्यालय व राजकीय महिला महाविद्यालय के संयुक्त कार्यक्रम में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वरिष्ठ प्रचारक श्री नंदलाल ने अपने पाथेय में कहा कि एक चरित्रवान शिक्षक ही चरित्रवान राष्ट्र का निर्माण कर सकता है। हमें कर्त्तव्याकर्त्तव्य का बोध हमारे धर्मग्रन्थों के पठन-पाठन से हो सकता है। रामायण व महाभारत के अनेक दृष्टान्तों का वर्णन करते हुए श्री नंदलाल ने कहा कि दायित्ववान गुरु अपने शिष्यों को निराशा से आशा की ओर अग्रेषित कर देता है। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. के. के. शर्मा ने की।

राजकीय पी.जी. महाविद्यालय, झालावाड़ में मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए डॉ. हमीद अहमद ने कहा कि हमें अपने कर्त्तव्यों का बोध मात्र न हो, वरन् हमारे आचरण में कर्त्तव्य की निष्पत्ति हो। श्रीमद्भगवद् गीता का उदाहरण देते हुए उन्होंने सदैव कर्मशील बने रहने का उद्बोधन दिया। विभाग सचिव डॉ. गजेन्द्र मालवीय ने नि:स्वार्थ भाव से कर्म करने का आह्वान किया। अध्यक्षता प्राचार्य डॉ. बी. एल. बैरवा ने की तथा डॉ. रामकल्याण मीणा ने आभार व्यक्त किया।

राजकीय एम. एस. कन्या महाविद्यालय, बीकानेर में मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए शिक्षाविद् जानकी नारायण श्रीमाली ने अपने उद्बोधन में कहा कि हमें अपनी धरोहर रूप इतिहास व संस्कृति से कर्त्तव्य पक्ष को सीखना चाहिए और जीवन में कर्त्तव्याभिमुख रहकर जीना चाहिए। तभी श्रेष्ठ समाज व राष्ट्र विकसित होगा। रुक्टा (राष्ट्रीय) के अध्यक्ष डॉ. दिग्विजयसिंह ने कर्त्तव्यता में निरन्तर क्षीणता पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि गुरु अपनी भावी पीढ़ी को जीवन दृष्टि दे, श्रेष्ठता की उड़ान दे, लक्ष्य का मार्गदर्शन दे तथा अहंकार से निवृत्ति दिलाने के भाव पोषित करे।

सम्राट पृथ्वीराज चौहान राजकीय महाविद्यालय, अजमेर में मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए 'मोटीवेशनल गुरु' वेद माथुर ने विभिन्न दृष्टान्तों के माध्यम से शिक्षा क्षेत्र में नवाचारों का प्रयोग करने पर बल दिया। वरिष्ठ पत्रकार एस. पी. मित्तल ने अपने उद्बोधन में कहा कि वही व्यक्ति अपनी अलग पहचान बना पाता है, जो अपने कर्त्तव्य पथ पर अडिग रहता है। अध्यक्षता डॉ. हासो दादलानी ने की एवं संचालन डॉ. अनूप आत्रेय ने किया।

कोटा महानगर के सभी महाविद्यालयों के संयुक्त कार्यक्रम में मुख्यवक्ता के रूप में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ चित्तौड़ प्रांत प्रचारक श्री विजयानंद ने नेताजी सुभाषचन्द्र बोस व डॉ. हेडगेवार के राष्ट्र निर्माण के ध्येय पूर्ण जीवन की विवेचना करते हुए उनके जीवन को कर्त्तव्य बोध का जीवन्त उदाहरण बताया। स्वामी विवेकानंद जैसे ऋषि तुल्य साधना द्वारा युवकों के चरित्र निर्माण में शिक्षकों की भूमिका के निर्वहन का आह्वान किया। प्राचीन शिक्षा व्यवस्था की तरह आज सर्वांगीण विकास पर बल देते हुए उन्होंने शिक्षकों एवं शिक्षा को प्रासांगिक बनाने का आह्वान किया। अध्यक्षीय उद्बोधन रुक्टा (राष्ट्रीय) के विभाग अध्यक्ष डॉ. विजय पंचौली ने दिया। विषय प्रबोधन प्रांतीय कार्यकारिणी सदस्य डॉ. गीताराम शर्मा ने किया।

इसी प्रकार डूंगरपुर, प्रतापगढ़, चित्तौड़गढ़, कन्या अजमेर, किशनगढ़, केकड़ी, बांसवाड़ा, कन्या श्रीगंगानगर, बून्दी, भरतपुर, बयाना, धौलपुर, अलवर, कन्या अलवर, सरदारशहर, खेतड़ी, जोधपुर, पाली, कोटपूतली, चौमू कन्या, नसीराबाद, शाहपुरा, चिमनपुरा, साँभरलेक, दौसा, सीकर, सुजानगढ़ सहित 98 इकाइयों में कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

कुटुम्ब प्रबोधन पुस्तक विमोचन कार्यक्रम जयपुर में सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ देश भर में 8 लाख से अधिक शिक्षकों का संगठन है। संगठन के.जी. से पी.जी. तक की शिक्षा के क्षेत्र में काम कर रहा है। समय-समय पर शिक्षा के उन्नयन के साथ समाजोत्थान से संबंधित अनेक विषयों पर कार्यक्रम पूरे देश भर में आयोजित करता रहा है। इसी शृंखला में 6 जनवरी 2018 को अग्रवाल कॉलेज के सभागार में **'कुटुम्ब प्रबोधन'** जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर विशेष व्याख्यान का आयोजन किया गया।

मुख्य वक्ता शैक्षिक प्रौद्योगिकी विभाग, अजमेर के अनुसंधान अधिकारी हनुमान सिंह राठौड़ ने भारतीय पारिवारिक पद्धति पर प्रकाश डालते हुए कहा कि भारत में पति-पत्नि का संबंध सात जन्मों का होता है। आज देश में भौतिकवाद हावी है। जिसके चलते डिंक फैमली का जन्म हुआ है जो कि भारतीय संस्कृति के लिए घातक है। इस पुस्तक में अभिवादन, गुरुवंदन, साधु, आज्ञापालन, अवतार कथा, संगति संगीति, प्रतिज्ञा, बड़प्पन, समर्थ को दोष नहीं का अर्थ, रामकाज, समरसता, मातृभूमि भारत, रामराज्य, संस्कार गृह जैसे विषयों पर गहराई से प्रकाश डाला गया।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि राज्य बाल आयोग की अध्यक्ष श्रीमती मनन चतुर्वेदी ने कहा कि शिक्षा से ही राष्ट्र व समाज का निर्माण होता है। शिक्षा का बीज मंत्र संस्कार है। उसके पीछे माँ है। शिक्षक समाज की रीढ की हड्डी है। पूरे विश्व में कुटुम्ब की अवधारणा भारतीयों की देन है।

महासंघ के अध्यक्ष श्री जगदीश प्रसाद सिंघल ने कहा कि भारतीय परिवार व्यवस्था सर्वश्रेष्ठ है, जो कि विश्व में अद्वितीय है। इसे पश्चिम की संस्कृति से बचाना है और भारत को विश्व गुरु बनाना है, जिसमें हम सभी भारतीयों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

हनुमान सिंह राठौड़ द्वारा लिखित पुस्तक **'कुटुम्ब प्रबोधन' (रामचरितमानस के आलोक में परिसंवाद पर आधारित)** विषयक पुस्तक का विमोचन अतिथियों द्वारा किया गया, साथ ही शैक्षिक मंथन पत्रिका के विशेषांक **'भविष्य का भारत और शिक्षा'** का भी विमोचन किया गया। इस अवसर पर महासंघ के पूर्व अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल, संगठन मंत्री महेन्द्र कपूर, मंथन पत्रिका के सम्पादक प्रो. संतोष पाण्डेय, अधिनस्थ सेवा चयन बोर्ड के अध्यक्ष डॉ. नंद सिंह नरूका एवं गणमान्य व्यक्ति उपस्थित रहे। कार्यक्रम के संयोजक विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी ने धन्यवाद ज्ञापन व संचालन बसन्त जिन्दल ने किया।

हिमाचल में आदर्श स्कूलों की संकल्पना

हिमाचल प्रदेश में सिर्फ एक-एक शिक्षकों के सहारे चल रहे प्राइमरी स्कूलों को मर्ज करने की तैयारी शुरू हो गई है। राज्य सचिवालय में हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ के साथ हुई शिक्षा मंत्री सुरेश भारद्वाज की बैठक में शिक्षकों की कमी से जूझ रहे स्कूलों पर विस्तार से चर्चा की गई। बैठक में सहमति बनी कि एकल शिक्षक वाले स्कूलों को मर्ज कर पंचायत स्तर पर आदर्श प्राथमिक स्कूल खोले जाएँ। इन आदर्श स्कूलों में शिक्षकों के सभी पद भरे जाएँ।

शिक्षा मंत्री सुरेश भारद्वाज ने इस संदर्भ में प्रारंभिक शिक्षा निदेशालय से प्रस्ताव तैयार करने को कहा है। शिक्षक महासंघ की बैठक में शिक्षक नेताओं ने कहा कि शिक्षा हित और शिक्षा के उत्थान के लिए जगह-जगह स्कूल खोलने की जगह वर्तमान में उपलब्ध स्कूलों की स्थिति को बेहतर किया जाए।

गाँव-गाँव में प्राथमिक स्कूल खोलने की जगह पंचायत स्तर पर एक आदर्श प्राथमिक स्कूल खोला जाए। आदर्श स्कूल में कम से कम पाँच अध्यापक और एक मुख्याध्यापक का पद सृजित कर गाँव से बच्चों को लेने के लिए वाहन की व्यवस्था की जाए। सरकारी स्कूलों का अस्तित्व बचाने के लिए प्राथमिक विद्यालयों में नर्सरी कक्षाओं की व्यवस्था कर प्रवेश आयु तीन साल की जाए।

कहा गया कि सरकारी स्कूलों में प्रवेश की आयु पाँच साल है। ऐसे में निजी स्कूल नर्सरी में तीन साल के बच्चे को प्रवेश देकर सरकारी स्कूल में आने से रोक देते हैं। महासंघ के पदाधिकारियों की बातों से सहमत होते हुए शिक्षा मंत्री सुरेश भारद्वाज ने प्रारंभिक शिक्षा निदेशक को जल्द से जल्द 'एकल शिक्षक' वाले स्कूलों का ब्यौरा देने के आदेश दिए।

ओडिशा प्रान्त में कर्तव्य बोध कार्यक्रम

राष्ट्रवादी शिक्षक परिषद ओडिशा द्वारा ब्रह्मपुर नगर के आनन्दमार्गी आश्रम में 23 जनवरी, 2018 को 'कर्त्तव्य बोध दिवस' कार्यक्रम प्रो. रविनारायण मिश्र की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। मुख्य अतिथि थे आनन्दमार्गी आचार्य जयशिवानन्द प्रभु, मुख्यवक्ता के रूप में अवसरलब्ध अध्यापक डॉ. निरंजन पट्टनायक ने आचरण और उच्चारणों में साम्यता लाने के लिए परामर्श दिए।

इस अवसर पर प्राध्यापक रमेश चरण त्रिपाठी, डॉ. प्रफुल्ल चन्द्र मोहन्ति, चित्तरंजन पंडा, डॉ. प्रकाश चन्द पाणिग्राही, श्यामसुन्दर खाड्ङ्गा, देवीप्रसाद महापात्र, हाडिबंधु माली, कुश बहैरा, व्योमकेश त्रिपाठी, सुवास चन्द्र दास प्रमुख अलोचना में भाग लेते हुए नेताजी सुभाष चन्द जी के आदर्श के अनुसार हमें स्व कर्त्तव्य पालन करने की बात पर जोर दिया।

प्रदेश महामन्त्री गोपालकृष्ण पादी ने अतिथि परिचय व स्वागत किया। प्रान्त मन्त्री प्रमोद कुमार बाजुबन्ध ने संगठन व कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम के उद्देश्य स्पष्ट किए। जिला सम्पादक पूर्णचन्द्र आचार्य ने आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम संचालन में संजय कुमार पाल, सरोज रंजन पट्टनायक, एस-विश्वनाथ, नीलाम्बर महापात्र प्रमुख का सक्रिय सहयोग रहा।

इसी प्रकार ओडिशा प्रान्त के जगतसिंहपुर जिला में प्रान्ताध्यक्ष निलुराम जेना के उपस्थिति में, याजपुर जिला में रवीन्द्रकुमार बिहारी के उपस्थिति में, कटक जिला में साधुचरण प्रधान की उपस्थिति में, पुरी जिला में आनन्दी श्रीचन्दन की ढेकानाल जिला में देवराज साहु की उपस्थिति में कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) का जयपुर में धरना

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) ने राज्य सरकार द्वारा राजकीय विद्यालयों को पीपीपी मोड पर देने के विरोध में प्रदेश पदाधिकारियों, समस्त जिला अध्यक्षों, जिला मंत्री एवं महिला मन्त्रियों सहित हजारों शिक्षकों ने 5 जनवरी, 2018 को जिला कलक्टर कार्यालय, जयपुर में धरना दिया और मुख्यमंत्री महोदया और मुख्य सचिव को ज्ञापन दिया।

महामंत्री देवलाल गोचर ने बताया कि संगठन ने लम्बे समय से राज्य सरकार को विभिन्न माध्यमों से ध्यान आकृष्ट कर तथा विभिन्न स्तर पर वार्ता में विसंगतियों के निराकरण का सतत् आग्रह किया है। इसके बावजूद छठे वेतनमान में रही विसंगतियों का निराकरण किये बिना ही सातवें वेतनमान की सिफारिशों को लागू करने तथा केन्द्र की पे-मैट्रिक से कम राज्य की पे-मैट्रिक निर्धारित करने पर राज्य के शिक्षक आन्दोलनरत हैं। अधिसूचना के जारी करने के साथ ही 5वीं अनुसूची में संशोधन कर व्याख्याता संवर्ग के वेतनमान में भारी कटौती करते हुए उनका वेतन कम कर दिया है जिससे शिक्षकों में भारी आक्रोश व्याप्त है। संगठन ने इस कारण आन्दोलन प्रारम्भ कर उपशाखा, जिलाशाखा एवं संभाग स्तर पर धरने-प्रदर्शन करते हुए सरकार को ज्ञापन दिये है मगर सरकार द्वारा कोई सकारात्मक निर्णय नही लिया गया है। अत: संगठन ने बाध्य होकर प्रदेश स्तरीय धरने का आयोजन किया है।

प्रदेशाध्यक्ष प्रहलाद शर्मा ने बताया कि राज्य सरकार ने वेतन विसंगतियाँ दूर नही की अपितु प्रदेश के 300 विद्यालयों को पीपीपी मोड पर देने का निर्णय कर प्रदेश के शिक्षकों, अभिभावकों, विद्यार्थियों और आम जनता के विरुद्ध कार्य किया है। यह राज्य की समस्त शिक्षा को निजी क्षेत्र में देने की योजना का अंग है। संगठन इस जनविरोधी कदम के विरोध में अपने आन्दोलन को सार्थक परिणति तक पहुँचाने के लिए कृत संकल्प है।

राज्य सरकार के आमन्त्रण पर संगठन के शिष्टमण्डल ने सचिवालय में राजस्थान सरकार के मुख्य सचिव एन. सी. गोयल से वार्ता की। शिष्ट मण्डल ने मुख्य सचिव को संगठन के द्वारा उपर्युक्त माँगों को लेकर उपशाखा, जिलाशाखा एवं संभाग स्तर पर हुए कार्यक्रमों की जानकारी देते हुए शिक्षकों के आक्रोश से अवगत कराया। मुख्य सचिव ने शिष्ट मण्डल को आश्वस्त किया कि राज्य सरकार शिक्षकों की माँगों के प्रति संवेदनशील है तथा सकारात्मक ढंग से विचार कर रही है। केन्द्रीय मद के शिक्षकों के वेतन के विषय को भी शिष्टमण्डल ने इस अवसर पर उठाते हुए समय पर वेतन बजट आवंटन का आग्रह किया। मुख्य सचिव ने वित्त एवं शिक्षा विभाग के सचिव से तत्काल बात कर 400 करोड़ का बजट आज ही जारी करवाने तथा 536 करोड़ का बजट आगामी सप्ताह में जारी कराने की कार्यवाही की। धरने को संगठन के संरक्षक राजनारायण शर्मा, संगठन मंत्री महावीर प्रसाद सिंहल व अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के क्षेत्र प्रमुख बजरंग प्रसाद मजेजी सहित अनेक जिलों के जिलाध्यक्ष-जिलामंत्री ने सम्बोधित किया।

शिक्षा का उद्देश्य जीवन को संस्कारों से गढ़ना-महेन्द्र कपूर

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) का जयपुर जिला महिला शिक्षक सम्मेलन दिनांक 06 जनवरी 2018 को प्रान्तीय कार्यालय जयपुर के सभागार में आयोजित हुआ, जिसके उद्घाटन सत्र की मुख्य अतिथि श्रीमती ममन चतुर्वेदी (अध्यक्ष, बाल संरक्षण अधिकार आयोग) ने अपने संबोधन में कहा कि एक बालक को एक अच्छा इन्सान बनाने का कार्य एक शिक्षक ही कर सकता है और यदि वह शिक्षक महिला हो तो यह कार्य सरलता से परिणाम तक पहुँच सकता है। कार्यक्रम के उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता श्री महेन्द्र कपूर (राष्ट्रीय संगठन मंत्री, अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ) ने की। उन्होंने प्रबोधन करते हुए कहा कि शिक्षा का उद्देश्य जीवन को संस्कारों से गढ़ना होना चाहिए तथा समाज में ज्ञान की वर्षा करने वाले तो बहुत मिल जायेंगे किन्तु संस्कारों की वर्षा करने वाले नहीं मिलेंगे। यह कार्य संगठन की कार्यकर्ता विशेष रूप से महिला शिक्षक बहनें बखूबी कर सकती है।

द्वितीय सत्र में मुख्य वक्ता श्रीमती रजनी शर्मा (बौद्धिक प्रमुख, राष्ट्र सेविका समिति) ने महिलाओं को सोच में परिवर्तन लाने पर जोर दिया तथा सशक्त होने के लिये तख्ती लेकर बाहर नहीं निकलना पड़ता, उसके लिये प्रयास करना होगा। तृतीय सत्र में प्रदेश महिला मंत्री डॉ. अरुणा शर्मा ने संगठन की कार्य पद्धति, संगठन में कार्य करने पर शिक्षिकाओं को आने वाली समस्याओं, उनके समाधान व संगठन से अपेक्षा आदि विषय पर विस्तृत चर्चा की। चतुर्थ सत्र में संगठन के महामंत्री देवलाल गोचर ने महिलाओं को दृढ़ता के साथ आगे बढ़ने पर जोर दिया।

महिलाएँ संगठन कार्यों में भी अपनी भूमिका निभाएँ

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) का जिला महिला शिक्षक सम्मेलन दिनांक 21 जनवरी 2018 को राजकीय जवाहर उच्च माध्यमिक विद्यालय, अजमेर में सम्पन्न हुआ, जिसमें महिलाओं के अधिकार व उनकी समस्याओं पर चर्चा की गई। मुख्य वक्ता डॉ. नारायणलाल गुप्ता, महामंत्री रुक्टा (रा.) ने कार्यस्थल व संगठन में कार्य करने पर महिलाओं के समक्ष चुनौतियों पर प्रकाश डाला। स्वामी अनादि सरस्वती ने शिक्षक महिलाओं में स्वामी विवेकानन्द के जीवन के प्रेरक प्रसंगों के माध्यम से राष्ट्रभक्ति के भाव भरने की बात कही। अतिरिक्त जिला शिक्षा अधिकारी (मा.) दर्शना शर्मा ने 'महिलाओं में नेतृत्व का विकास कैसे हो' को महाभारत के उदाहरण द्वारा समझाया। प्रदेश महिला मंत्री डॉ. अरुणा शर्मा ने बालिका शिक्षा के लिये नवाचारों का प्रयोग करने का आह्वान किया। महिलाएँ किसी भी रूप में पुरुषों से कम नहीं है। अब संकोच छोड़कर उनको संगठन कार्यों में बढ़-चढ़कर भाग लेना चाहिये।

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) एकमात्र ऐसा संगठन है जो अपने अधिकारों के साथ-साथ सामाजिक सरोकारों के कार्य भी कर्तव्य बोध दिवस के अन्तर्गत विभिन्न आयोजनों के माध्यम से करता है। इस अवसर पर 200 से अधिक महिला शिक्षकों ने भाग लिया।

दिल्ली अध्यापक परिषद पूर्वी जिला इकाई द्वारा कर्तव्य बोध

वर्तमान काल में शिक्षक की स्थिति हम से छुपी नहीं है, ऐसी अवस्था में शिक्षा का उद्देश्य छात्रों का सर्वांगीण विकास करना है ताकि वे राष्ट्र के संस्कारवान नागरिक बन सके। समाज में शिक्षक की जीवन शैली भी भौतिकवाद से प्रभावित है, शिक्षक भी अपनी सीमित सोच के कारण दायित्वबोध के स्थान पर अपनी नौकरी की सुरक्षा और वेतन से सरोकार रखने वाले बन चुके हैं, इस चिंतनीय वातावरण में दिल्ली अध्यापक परिषद् के पूर्वी जिला ने अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के आह्वान पर दिनांक 28, जनवरी 2018 को DPMI न्यू अशोक नगर के सभागार में कर्तव्य बोध कार्यक्रम आयोजित कर के सकारात्मक दृष्टिकोण पैदा करने का प्रयास किया।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. विनोद बछेती, समाजसेवी एवं निदेशक, DPMI ने अपने उद्बोधन में स्वामी विवेकानंद और पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम जी का आदर्श स्वरूप प्रस्तुत किया इसके उपरांत नन्द किशोर शर्मा ने सभी शिक्षकों को उनके कर्तव्यों का संकल्प कराया।

मुख्य वक्ता दिल्ली अध्यापक परिषद् के प्रदेश संगठन मंत्री राजेंद्र गोयल ने कहा कि समाज में अन्य व्यक्तियों के साथ साथ शिक्षक की जीवनशैली भी भौतिकतावाद से प्रभावित है। शिक्षक भी अपनी सीमित सोच के कारण दायित्वबोध के स्थान पर अपनी नौकरी की सुरक्षा और वेतन से सरोकार रखने वाला हो गया है। पेशेवर शिक्षक बनने के कारण हम अपनी प्रतिष्ठा और सम्मान खोते जा रहे हैं। यहाँ पर विद्यार्थियों के साथ उनका संपर्क समाप्त हो जाता है। दिल्ली अध्यापक परिषद का यह मत है कि शिक्षकों के मानवीय मूल्य, आदर्श व्यवहार, स्वानुशासन, कर्तव्यनिष्ठा, सेवा भाव, नेतृत्वक्षमता, समानता, त्याग एवं सकारात्मक सोच समाज के लिए अनुकरणीय होती है। जिला अध्यक्ष पूर्वी जिला अनिल कुमार चौधरी ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

इस अवसर पर NDMC निकाय के अध्यक्ष राजेंदर सिंह, संगठन मंत्री शिवेन्दर सिंह, विद्यालयों के प्राचार्य, SMC उपाध्यक्ष, सदस्य एवं समाज के विभन्न वर्गों के प्रबुद्ध व्यक्ति उपस्थित रहे। कार्यक्रम का मंच संचालन संजय तिवारी एवं बी एन दीक्षित ने किया, कार्यक्रम के प्रारम्भ में संगठन का परिचय अवधेश पराशर, संगठन मंत्री, राजकीय निकाय ने कराया।

छत्तीसगढ़ में कर्तव्यबोध कार्यक्रम

पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ, रायपुर (छ.ग.) में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की प्रेरणा से दिनांक 12 से 23 जनवरी 2018 तक कर्तव्य बोध दिवस मनाया। पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय परिक्षेत्र के अध्यक्ष डॉ.चन्द्रशेखर चौबे के नेतृत्व में कर्तव्य बोध दिवस का शुभारम्भ 12 जनवरी को महाविद्यालयीन छात्र-छात्राओं एवं प्राध्यापकों द्वारा बी.सी.एस. शासकीय पी.जी. महाविद्यालय, धमतरी से रत्नाबांधा चौक में स्थित स्वामी विवेकानंद जी की प्रतिमा तक रैली निकाली गई। विवेकानंद जी की मूर्ति पर माल्यार्पण कर उपस्थित छात्र-छात्राओं एवं प्राध्यापकों को संबोधित करते हुए डॉ.चन्द्रशेखर चौबे ने कहा कि आप सभी छात्र/छात्राएँ युवा शक्ति है, आप सभी के हाथ में देश का भविष्य है। अत: मैं आप सभी से यह आह्वान करता हूँ कि उठो, चलो और तब तक चलते रहो जब तक आपको लक्ष्य प्राप्त न हो जाए। आप सभी स्वामी विवेकानंद जी के बताये हुए आदर्शों को अपने जीवन में आत्मसात करें। विवेकानंद जयंती के अवसर पर महाविद्यालय में भारत के आध्यात्मिक दर्शन की दृष्टि से ''स्वामी विवेकानंद जी का योगदान'' विषय पर परिचर्चा प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमें छात्र-छात्राओं ने विवेकानंद जी के आदर्शों पर अपने विचार व्यक्त किए। उक्त अवसर पर विवेकानन्द जी से संबंधित प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता भी आयोजित की गई।

सरगुजा विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ व राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संयुक्त तत्वावधान में कर्तव्य बोध दिवस का आयोजन सरस्वती शिशु मन्दिर में किया। कार्यक्रम का शुभारम्भ कार्यक्रम के अध्यक्ष प्रो. मधुर मोहन रंगा ने माँ सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण कर प्रारम्भ किया। मुख्य वक्ता नारायण रामदेव ने नेताजी सुभाष बोस के कृतित्व व व्यक्तित्व एक बल देते हुए उनसे कहा कि हमें उनके पराक्रम से प्रेरणा लेनी चाहिये। कार्यक्रम के अध्यक्ष प्रो. मधुर मोहन रंगा ने शैक्षिक महासंघ का परिचय देते हुए कहा कि संगठन का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र के हित में शिक्षा, शिक्षा के हित में शिक्षक व शिक्षक के हित में समाज है। संगठन का विस्तार अखिल भारतीय है व संघ राष्ट्रीय है। संगठन विवेकानन्द जयंती से नेताजी सुभाष बोस जयंती की अवधि में पूरे देश में कर्तव्य बोध दिवस का आयोजन करता है जिससे यह अपेक्षा की जाती है कि सभी सम्पूर्ण मनोयोग से अपने संपूर्ण दायित्वों का निर्वहन कर व्यक्ति, समाज व राष्ट्र को पाथेय प्रदान करे। भारतीय संस्कृति में कर्म को 'धर्म' की संज्ञा दी गई है और उसे धारण कर समष्टि का कल्याण करे। उन्होंने नेताजी सुभाष बोस का स्वाधीनता संग्राम में योगदान का उदाहरण देते हुए कहा कि सशस्त्र क्रांति के योगदान को नकार नहीं सकते। कार्यक्रम में संगठन के अध्यक्ष डॉ. एस.के. श्रीवास्तव, डॉ. बी.पी. तिवाड़ी, डॉ. पुनीत राय, डॉ. पीयूष पाण्डे, डॉ. प्रदीप श्रीवास्तव, डॉ. हर्ष पाण्डेय उपस्थित थे।